दसवां विश्व हिन्दी सम्मेलन एवं अन्य आलेख.

गोवर्धन यादव

अनुक्रम.

....

परिचय

***नाम**--गोवर्धन यादव

***पिता-.** स्व.श्री.भिक्कुलाल यादव

***जन्म स्थान -मुलताई.(जिला) बैतुल.म.प्र.**

*** जन्म तिथि-** 17-7-1944 *शिक्षा - स्नातक

*तीन दशक पूर्व कविताऒं के माध्यम से साहित्य-जगत में प्रवेश

*देश की स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का अनवरत प्रकाशन

*आकाशवाणी से रचनाओं का प्रकाशन

*करीब पैतीस कृतियों पर समीक्षाएं

***कृतियाँ *** महुआ के वृक्ष (कहानी संग्रह) सतलुज प्रकाशन पंचकुला(हरियाणा)

*तीस बरस घाटी (कहानी संग्रह,) वैभव प्रकाशन रायपुर (छ,ग.)

पीडीएफ ईबुक – गोवर्धन यादव का कविता संग्रह - बचे हुए समय में
http://www.rachanakar.org/2014/11/blog- post_51.html

पीडीएफ ईबुक : गोवर्धन यादव का लघुकथा संग्रह http://www.rachanakar.org/2014/11/blog-post_627.html

पीडीएफ ई बुक : गोवर्धन यादव का कहानी संग्रह - तीस बरस घाटी
http://www.rachanakar.org/2014/11/blog- post_969.html

: ई-बुक : कौमुदी महोत्सव - हमारे तीज त्यौहार http://www.rachanakar.org/2015/03/blog-post_444.html

पीडीएफ ईबुक – गोवर्धन यादव का कहानी संग्रह - महुआ के वृक्ष
http://www.rachanakar.org/2014/11/blog-post_670.html

देश-विदेश की यात्राएं.

https://hindi.pratilipi.com/govardhan-yadav/ghumakkadi-romanchit-kar-dene-waali-yaatraaye
भारत के पर्व और त्योहार.
https://hindi.pratilipi.com/govardhan-yadav/bharat-me-parv-tyoharo-ki-shrinkhala-bhag-1

भारत के पर्व और त्योहार-पार्ट-२
https://hindi.pratilipi.com/govardhan-yadav/bharat-me-parv-tyoharo-ki-shrinkhala-2

__सम्मान__ बीस से अधिक साहित्यिक मंचों द्वारा सम्मानित

***विशेष उपलब्धियाँ:-**औद्धोगिक नीति और संवर्धन विभाग के सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से संबंधित विषयों तथा गृह मंत्रालय,राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित नीति में सलाह देने के लिए वाणिज्य और उद्धोग मंत्रालय,उद्धोग भवन नयी दिल्ली में "सदस्य" नामांकित

(2)केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय(मानव संसाधन विकास मंत्रालय) नयी दिल्ली द्वारा_कहानी संग्रह"महुआ के वृक्ष" तथा "तीस बरस घाटी" की खरीद की गई.

(३) कई कहानियाँ का उर्दू, मराठी, राजस्थानी, उडिया, सिंधी,भाषाओं में रुपान्तरित की गईं.

(2) **हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए थाईलैण्ड, नेपाल, मारीशस, इन्डोनेशिया-मलेशिया.भूटान,बंगलादेश आदि देशों का भ्रम**

*__संप्रति__ - सेवानिवृत पोस्टमास्टर (एच.एस.जी.1)
संयोजक राष्ट्र भाषा प्रचार समिति जिला इकाई छिंन्दवाड़ा (म.प्र.) 480-001
फ़ोन.नम्बर–07162-246651 (चलित) 09424356400
Email= yadav.goverdhan@rediffmail.com
(2) goverdhanyadav44@gmail.com

....

1 दसवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन मेरी नजरों में.

निश्चित रूप से मैं स्वयं को बड़भागी मानता हूँ कि मुझे मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल में होने जा रहे १० वें विश्व हिन्दी सम्मेलन में जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ. इस सम्मेलन में भाग लेने से पूर्व एक पूरा इतिहास आँखों के सामने अनावृत्त होने लगा

सदियों से पराधीन भारत उन्नीसवीं सदी तक आते-आते विदेशी शासन के खिलाफ़ उठ खड़ा हुआ. लोगों के में राष्ट्रीय भावना जागृत हुई. भारतीय जननायकों और प्रबुद्ध व्यक्तियों के मन में भारत को स्वतंत्र देखने के सपने सजने लगे. उन्होंने मार्ग खोजा और जनता का मार्गदर्शन किया. उनका मानना था कि भावों और विचारों के आदान-प्रदान और अभिव्यक्ति का प्रधान साधन ही भाषा नहीं होती है अपितु वह समाज तथा राष्ट्र की भावनात्मक एकता का प्रतीक भी हुआ करती है.

भारतीय जन-नायकों ने जन-आंदोलन के लिए हिन्दी को अपनाया और उसका समर्थन किया. वे जान चुके थे कि हिन्दी भाषा में ही वह शक्ति है जो जन-जन को जोड़ने का सशक्त मध्यम बन सकती है, क्योंकि इसके बोलने और समझने वालों की संख्या सबसे अधिक है.

राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का सम्र्थन हिन्दीतर प्रदेशों के जननायकों, समाज सुधारकों और विद्वानों ने किया. बंगाल के केशवचन्द्र सेन, बंकिमचन्द्र, शारदाशरण मित्र, गुजरात के स्वामी दयानन्द सरस्वती, महाराष्ट्र के लोकमान्य बालगंगाधर तिलक आदि ने जनभाषा के रूप में हिन्दी का पुरजोर समर्थन किया. उन्नीसवीं सदी के अंत तक हिन्दी का पक्ष सबल बन चुका था. उत्तर भारत के विद्वानों, सहित्यकारों और नेताओं ने हिन्दी क दृढ़ता से समर्थन किया.

महात्मा गांधीजी की प्रेरणा से हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए 1918 में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास में स्थापित हुई. उनका विचार था कि दक्षिण के चार प्रदेशों को छोड़कर शेष प्रदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य व्यवस्थित रूप से चलाए जाने की व्यवस्था की जाए. उन्हीं की प्रेरणा से हिन्दी प्रचार समिति की स्थापना की गई. दिनांक 4 जुलाई 1936 को वर्धा में महात्मा गांधीजी के निवास पर इस समिति की साधारण बैठक हुई,जिसमें 21 सदस्य उपस्थित थे. डा. राजेन्द्रप्रसादजी को अध्यक्ष, सेठ जमनालाल बजाज को उपध्यक्ष एवं कोषाध्यक्ष, मोटूरी सत्यनारायणजी को मंत्री एवं श्रीमन्नारायण जी अग्रवाल को संयुक्त सचिव बनाया गया.

समिति अपना कार्य सुचारु रूप से कर ही रही थी. इसी समय एक नया विचार कौंधा कि क्यों न हिन्दी शब्द की जगह “राष्ट्रभाषा” शब्द जोड़ दिया जाए. प्रस्ताव पारित हुआ. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति कीदो बैठकें 12-04-1942 तथा 21-06-1942 को आहूत की गईं. इन दोनों बैठकों मे महात्मा गांधीजी, डा.श्री राजेन्द्र प्रसादजी, काका साहेब कालेलकरजी तथा श्रीमन्नारायणजी उपस्थित थे.. दिनांक 12-07-1942 को गांधीजी की कुटी में नव-गठित राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की पहली बैठक हुई. इस बैठक में राजर्षि पुरुषोत्तमदास टन्डन जी को अध्यक्ष, श्री भदन्त कौसल्यायन जी को मंत्री, और श्री रामेश्वर दयाल दुबेजी को सहायक मंत्री बनाया गया.

विश्व हिन्दी सम्मेलन की परिकल्पना.

स्वंतत्रता सेनानी, आदिवासियों के विकास को गति देने में संलग्न एवं २१ वर्षों तक महाराष्ट्र सरकार में मंत्री पद संभाल चुके श्री मधुद्करराव जी चौधरी को 06-05-1972 में समिति की बैठक में सर्वानुमति से समिति का अध्यक्ष चुना गया. अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में आपने कहा-“ समिति देश-विदेश में राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार में अपना काम कर रही है. इसे और आगे बढ़ाने का अनुकूल वातावरण है. **हिन्दी को राष्ट्रीय स्तर से अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर ले जाने के लिए समिति को प्रयास करना चाहिए और कार्यक्षेत्र को बढ़ाना चाहिए. इस कार्य के लिए “विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन होना चाहिए.”**

समस्त कार्यों का मूल्यांकन करने, भविष्य में कार्य करने की दिशा निर्धारित करने के उद्देश्य से देश-विदेश के समस्त हिन्दी सेवियों, विद्वानों और लेखकों के सामुहिक चिंतन तथा विचार-विमर्श की अवश्यकता महसूस की जा रही थी. सन 1973 में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने गहन विचार-विमर्श के पश्चात, आचार्य विनोबा भावे का आशीर्वाद और प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधीजी के सहयोग का आश्वासन मिलने के बाद **प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन** भारत के केन्द्रीय शहर नागपुर में आयोजित करने का निर्णय किया गया.

हिन्दी की बेल जो पूरे विश्व में फ़ैलकर पुष्पित हो रही है.

हिन्दी भाषा की तुलना मैं किसी बेल से कर रहा हूँ तो यह प्रकल्पित नहीं है बल्कि हकीकत है. हमारी हिन्दी ठीक उस बेल अथवा बेला की तरह है जिसकी जड़ें और तना तो हिन्दूस्थान में दिखाई देता है लेकिन उसकी शाखा-

प्रशाखाएँ पूरे विश्व में फ़ैल कर पुष्पित हो रही है. उसमें एक नहीं बल्कि कई तरह के रंग-बिरंगे पुष्प खिल रहे हैं जो आमजन को अपने सम्मोहन से सम्मोहित कर रहे है.

यह लिखते हुए मुझे डा.सर्वादानंद द्विवेदी जी की काव्य-पंक्तियाँ याद आ रही है. वे लिखते हैं-

"ज्ञान-समुद्र कबीर-रहीम का पीती अगस्त हथेली है हिंदी.
मीरा की प्रेम-तरंगिनी-अंग के रंगन संग में खेली है हिंदी..
अनुराग-तड़ाग में फ़ूली-फ़ली विकसी जग-राम कहानी है हिंदी.
देश-प्रदेशन साथ चली, अब विश्व के मंच की वाणी है हिंदी..

आज भले ही वह देश की राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई हो (राजनैतिक कारणॊं से) लेकिन साधु-संतों की यह भाषा- संपर्क भाषा, राजभाषा के सोपानों को पार करती हुई विश्व भाषा के रुप में प्रतिष्ठित हो चुकी है. अब यह एक देशीय भाषा नहीं रही बल्कि बहुदेशीय भाषा बन गई है. मारीशस, सुरीनाम, गुयाना, फ़ीजी, ट्रिनीडाड जैसे देश जहाँ भारतीय मूल के लोग बहुतायत में हैं, के लिए तो हिंदी आज उनके अस्तित्व की भाषा बन गई है. गिरमिटिया मजदूर के रुप में भारत से जाते हुए लोग इसे अपने साथ ले गए. इन सभी देशों में यह फ़लती-फ़ूलती तो रही, साथ ही उन देशों की सीमाओं में भी प्रवेश करते हुए फ़ल-फ़ूल रही है, जहाँ अंग्रेजी अपना साम्राज्य फ़ैलाये हुए थी. अतः यह कहते हुए तनिक भी संकोच नहीं कि बोलने-समझने वालों की दृष्टि में आज हिन्दी भाषा विश्व की सबसे बड़ी भाषा बनकर उभरी है. कभी दूसरे स्थान पर अंग्रेजी अपना स्थान बनाए हुए थी और मन्दारिन पहला. इसने अंग्रेजी को पीछे धकलते हुए दूसरा स्थान बना लिया है.

कहा जाता है कि हिन्दी का जन्म संस्कृत भाषा से हुआ है. अतः यह संस्कारवान है और व्याकरणीय भी. हिन्दी के देवनागरी लिपि विश्व की सर्वोत्तम वैज्ञानिक लिपि है. इसमें शब्दों का अपरिमित भण्डार है. इसका अपना बेजोड़ साहित्य है. साहित्य की लगभग सभी विधाओं में न केवल भारतीय बल्कि विदेशी मूल के रचनाकार भी हिन्दी में ही अपनी लेखनी कर रहे हैं. फ़िर हिन्दी का अपना एक अनोखा आकर्षण है जिसकी ओर विदेशी विद्वान लेखक भी हिन्दी को ही अपनी लेखनी का माध्यम बनाए हुए हैं. हिन्दी की अपनी खास विशेषताएँ भी है, जिसके बल पर वह संपूर्ण विश्व को अपने में समाहित किए हुए चल रही है.

इसकी खास विशेषताएँ.

(०) वर्तमान में यह संस्कृत, पाली, हिन्दी, मराठी, कोंकणी, सिंधी, कश्मीरी, नेपाली,बोडॊ,मैथिली आदि भाषाओं की लिपि है.

(०) उर्दू के अनेक साहित्यकार भी उर्दू लिखने के लिए अब देवनागरी लिपि का प्रयोग कर रहे हैं.

(०) इसका विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है.

(०) यह एक ध्वन्यात्मक(फ़ोनेटिक या फ़ोनेमिक) लिपि है, जो प्रचलित लिपियों(रोमन,अरबी,चीनी) में सबसे अधिक वैज्ञानिक है.

(०) इसमें कुल 52 अक्षर हैं, जिसमें 14 स्वर और 38 व्यंजन हैं.

(०) अक्षरों की क्रम व्यवस्था(विन्यास) भी बहुत ही वैज्ञानिक हैं. स्वर-व्यंजन, कोमल-कठोर, अल्पप्राण-महाप्राण, अनुनासिक-अन्तस्थ-ऊष्म इत्यादि वर्गीकरण भी वैज्ञानिक हैं.

(०) इस लिपि में विश्व की समस्त भाषाओं की ध्वनियों को व्यक्त करने की अद्भुत क्षमता है. वहीं यह लिपि है जिससे संसार की किसी भी भाषा को रुपांतरित किया जा सकता है.

(0) भारत तथा एशिया की अनेक लिपियों के संकेत देवनागरी से अलग है, पर उच्चारण व वर्ण-क्रम आदि देवनागरी के ही समान है. इसलिए इन लिपियों को परस्पर आसानी से लिप्यंतरित किया जा सकता है

(०) यह बाएँ से दाएँ की तरफ़ लिखी जाती है.

(०) देवनागरी लेखन की दृष्टि से सरल, सौंदर्य की दृष्टि से सुन्दर और वाचन की दृष्टि से सुपाठ्य है

(०) एक ध्वनि-एक सांकेतिक चिन्ह.

(०) एक सांकेतिक चिन्ह-एक ध्वनि

(०)स्वर और व्यंजन में तर्क संगत एवं वैज्ञानिक क्रमविन्यास

(०)वर्णों की पूर्णता एवं संपन्नता (52-वर्ण, न बहुत अधिक और न बहुत कम)

(०)उच्चारण और लेखन में एकरुपता.

(०)उच्चारण स्पष्टतता(कहीं कोई संदेह नहीं)

(०) लेखन और मुद्रण में एकरुपता (रोमन, अरबी और फ़ारसी में हस्तलिखित और मुद्रित रुप अलग-अलग है.)

(०) देवनागरी लिपि सर्वाधिक चिन्हों को व्यक्त करती है.

(०) लिपि चिन्हों के नाम और ध्वनि में कोई अन्तर नहीं (जैसे रोमन में अक्षर का नाम "बी" है और ध्वनि "ब" है

(०) मात्राओं का प्रयोग

(०)अर्ध अक्षरों के रुप की सुगमता.

3 प्रभु श्रीराम की अगवानी में मनाई गई "दीपावली"

ऐसी मान्यता है कि प्रभु श्रीराम अपनी पत्नि सीता तथा अनुज श्री लक्ष्मण जी के साथ चौदह बरस के बनवास के बाद अयोध्या लौट आने की खुशी में मनाई गई थी. श्रीराम संपूर्ण अयोध्या में सबके लाड़ले थे. जब पुरवासियों ने सुना कि उन्हें चौदह साल का बनवास महारानी कैकई के वर मांगने पर दिया गया है. इस खबर को पाकर पूरे अयोध्या में सन्नाटा पसर गया था. लोग बिलख-बिलख कर रोने लगे थे. एक गहरी उदासी ने पूरी आयोध्या को अपने आगोश में ले लिया था. शायद उस दिन के बाद से लोग अपनी सुध-बुध खो दिए थे. सब दुखी थे. श्रीराम के वन गमन के बाद यह पहली खबर श्री हनुमानजी के द्वारा श्री राम जी के मित्र निषादराज को फ़िर श्री भरतजी को मिली थी कि श्रीराम वनवास के बाद अयोध्या लौट रहे हैं. इस समय श्री भरत नन्दीग्राम में आश्रम बनाकर और श्रीराम की पादुकाएं लेकर निवास कर रहे थे. एक तरह से उन्होंने भी चौदह वर्षों के लिए अयोध्या छोड़ दिया था.

महर्षि वाल्मिक जी चुंकि श्री रामजी के समकालीन थे. उन्होंने ने ही सबसे पहले रामायण की रचना की थी. उन्हीं के शब्दो में हम जानने की कोशिश करेंगे. वे लिखते हैं-

अयोध्यां त्वरितो गत्वा शीघ्रं प्लव्गसत्तम*जानीही कश्चित कुशली जनो नृपतिमन्दिरे* श्रृंगवेरपुरं प्राप्य गुहं गहनगोचरम,निषादाधिपतिं ब्रूहे कुशलं वचनान्मम* श्रुत्वा तु मां कुशलिनमरोगं विगतज्वरम, भविष्यति गुहः प्रीतः स ममात्मसमः सखा* अयोध्यायाश्च ते मार प्रवृत्तिं भरतस्य च, निवेदायिष्यति प्रीतो निषादाधिपतिर्गुहः*भरतस्तु त्वया वाच्यः कुशलं वचनान्मम, सिद्धार्थं शंस मां तस्मै सभार्यं सहलक्ष्मणम

अर्थात्- श्री रामजी ने श्री हनुमानजी से कहा कि- "कपिश्रेष्ठ ! तुम शीघ्र ही अयोध्या जाकर पता लो कि राजभवन में सब लोग सकुशल तो हैं न ?,* श्रृग्वेरपुर में पहुंचकर वनवासी निषादराज गुह से भी मिलना और मेरी ओर से कुशल कहना. * मुझे सकुशल , नीरोग और चितारहित सुनकर विषादराज गुह को बड़ी प्रसन्नता होगी, क्योंकि वह मेरा मित्र है. मेरे लिए आत्मा के समान है.* निषादराज गुह प्रसन्न होकर तुम्हें अयोध्या का मार्ग और भरत का समाचार बताएगा* भरत के पास जाकर तुम मेरी ओर से उनका कुशल पूछना और उन्हें सीता एवं लक्ष्मण सहित मेरे सफ़ल मनोरथ होकर लौटने का समाचार बताना.

.* **एवमुक्त्वा महातेजाः सम्प्रह्ष्टतनूरुहः*उत्पपात महावेगाद वेगवन्विचारयन-**(युद्धकांड–२५)

निषादराज को शुभ समाचार से अवगत कराने के बाद श्री हनुमानजी वेग से आगे उड़ चले.

- **तं धर्ममिव धर्मज्ञं देहबन्ध्मिवापरम* उवाच प्राजंलिर्वाक्यं हनूमान मारुतात्मजः *वसन्तं दण्डकारण्ये यं त्वं चीरजटाधरन, अनुशोचसे काकुत्स्थं स त्वां कौशलमब्रवीत, प्रियमाख्यामि ते देव स्स्स्शोकं त्यज सुदारूणम, अस्मिन मुहूर्ते भ्राता त्वं रामेण सह संगतः (युद्ध कांड-३५-३६-३७)**
- अर्थात- मनुष्यदेह धारण करके आये हुए दूसरे धर्म की मांति उन धर्मज्ञ भरत के पास पहुंचकर पवनकुमार हनुमानजी हाथ जोड़कर बोले-"देव ! आप दन्डकारण्य में चीर-वस्त्र और जटा धारण करके रहने वाले जिन श्रीरघुनाथजी के लिए निरन्तर चिन्तित रहते हैं, उन्होंने आपको अपना कुशल-समाचार कहलाया है और आपका भी पूछा है. अब आप इस अत्यन्त दारूण शोक को त्याग दीजिए. मैं आपको बड़ा प्रिय समाचार सुना रहा हूं. आप शीघ्र ही अपने भाई श्रीराम से मिलेंगे.
- श्री हनुमानजी से शुभ समाचार पाकर प्रसन्न वदन श्री भरतजी ने आज्ञा दी....

***दैवतानि च सर्वाणि चैत्यानि नगरस्य च.सुगन्धमाल्वैर्वदित्रैरर्चन्त्य शुचयो नराः.*सूताः स्तुतिपुराणज्ञाः सर्वे वैतालिकास्तथा.सर्वे वादित्राकुशला गणिकाश्चैव सर्वशः.राजादारस्तथामात्याः सेन्याः सेनांगनागणाः.ब्र्हाहमणाश्च सराजन्याझ श्रेणीमुख्यास्तथा गणाः.अभिनिर्यान्तु रामस्य द्रष्टुं शशिनिभः मुखम* भरतस्य वचः श्रुत्वा शत्रुघ्न परवीरहा.विष्टीरनेकसाहस्त्रीश्चोदयामास भागशः.समीकुरुत निम्नानि विषमाणि समानि च.* स्थानानि च निरस्यन्तां नन्द्दिग्रामादितः परम,सिंचिन्तु पृथ्वीं कृत्स्नां हिमशीतेन वरिणा* ततो ऽ भ्यवकिरन्त्वाआन्ये लाजैः पुष्पै सर्वतः.समुच्छरितपताकास्तु रथ्याः पुरवारोत्तमे* शोभयन्तु च वेश्मानि सूर्यस्योदयनं प्रति. स्त्रग्दाममुक्तपुष्पैश्च सुवर्णैः पंचवणकैः* राजमार्ग्मसम्बाधं किरन्तु शतशो नराः. ततस्तच्छासनं श्रुत्वा शत्रुघ्नस्य मुदान्विताः.**

अर्थात- शुद्धाचारी पुरुष कुलदेवताओं का तथा नगर के सभी देवस्थानों का गाजे-बाजे के साथ सुगन्धित पुष्पों द्वारा पूजन करे.* स्तुति और पुराणों के जानकार सूत, समस्त वैतालिक (भाट), बाजे बजाने में कुशल सब लोग, सभी गणिकाएं, राजरानियां, मंत्रीगण, सेनाएं,सैनिकों की स्त्रियां, ब्र्हामण, क्षत्रिय तथा व्यवसायी-संघ के मुखियालोग श्रीरामचन्द्राजी के मुखचन्द्र का दर्शन करने के लिउए नगर से बाहर चलें.* भरतजी की बात सुनकर शत्रुवीरों का संहर करने वाले श्त्रुघ्न कई हजार मजद्दूरों की अलग-अलग टोलियां बनाकर उन्हें आज्ञा दी- "तुम लोग ऊँची-नीची भूमियों को सम्तल बना दोः.अयोध्या से नन्दिग्राम तक का मार्ग साफ़ कार दो, आसपास की सारी भूमि पर बर्फ़ की तरह ठंडॆ जलका छिड़काव कर दो.* तत्पाश्चात दूसरे लोग रास्ते में सब लोग लावा और फ़ूल बिखेर दें. इस श्रेष्ठ नगर की सड़कों के अगल-बगल ऊँची पताकाएं फ़हरा दो.*काल सूर्यदय तक लोग नगर के सब मकानों को सुनहरी पुष्पमालाओं, घानीभूत फ़ूलों के छोंटॆ गजरों, सूत के बन्धन रहित कमल आदि के पुष्पों से सजा दें.*राजमार्ग पर ज्यादा भीड़ न हो, इसकी व्यवस्था के लिए सैकड़ों मनुष्य सब ओर लग जायें. शत्रुघ्न का वह आदेश सुनकर सब लोग बड़ी प्रसन्नता के साथ उसके पालन में लग गए.

श्रीरामजी का स्वागत-सत्कार सूर्योदय के पश्चात किया गया था. अतः इस बात का उल्लेख वाल्मिक रामायण में नहीं मिलता की दीपों की रोशनी की गई थी. दिन में दीपों की रोशनी की भी नहीं जाती है. हां , भारतीय संस्कारों के अनुसार जब किसी का स्वागत-सत्कार किया जाता है तो थाली में कुम्कुम-अक्षत (चांवल) और जलता हुआ दीपक रखा जाता है. इसी थाली से पाहुने को तिलक लगाकर रोली लगाने का प्रचलन रहा है. इसके बाद उसकी आरती उतारी जाती है.

निश्चित ही श्रीरामजी का स्वागत न केवल उनकी माताओं ने किया बल्कि नगर की सारी नारियों ने किया था, जिनकी थालियों में दीप प्रज्जवलित किए हुए थे. वाल्मिकी रामायण के अलावा संत श्री तुलसीदासजी ने बहुत ही सुन्दर ढंग से इसे लिखा है

कंचन कलस बिचित्र संवारें. सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे
बंदनवार पताका केतू. सबन्हि बनाए मंगल हेतू
बीथीं सकल सुगंध सिंचाईं.गजमनि रचि बहु चौक पुराई
नाना भांति सुमंगल साजे. हरषि नगर निसान बहु बाजे

जहँ तहं नारि निछावरि करहीं* देहेइं असीस हरष उर भरहीं
कंचन थार आरती नाना* जुबतीं सजे करहिं सुभ गाना
करहिं आरती आरतिहर के* रघुकुल कमल बिपिन दिनकर कें
पुर सोभा संपति कल्याना. निगम सेष सारदा बखाना

(उत्तरकांड-९)

स्वर्ण कलशों को विचित्र ढंग से संभाल कर और सजाकर सबने अपने-अपने द्वारों पर रख दिए. सब नेमंगल के लिए बन्दनवार, ध्वजाएं और पताकाये, लगाईं. सब गलियाँ सुगन्धि से सींचीं गई, गजमुक्तों से रचकर बहुत से चौक पूराए गए. नाना प्रकार के सुमंगल साज सजाए गए और हर्ष से नगर में बहुत से डंका बजने लगे. जहां-तहां स्त्रियां निछावर करती हैं तथा हर्ष परिपूर्ण ह्रदय से आशिषे दे रही हैं. बहुत सी युवतियां स्वर्ण-थालों में अनेकों आरती सजाकर शुभ मंगल गान गाती है . वे दुखहारी रघुकुल रुपी कमल-वन के सूर्य, श्रीरामजी की आरती करती हैं. नगर की शोभा सम्पत्ति और कल्याण का बेद, शेषजी और सरस्वती बखान करते है,. वे भी इस चरित्र को देखकर ठगे से रह जाते हैं.

उपरोक्त भक्त कवियों की रचाना को देखकर निश्चित ही कहा जा सकता है कि दीपावली का यह पावन पर्व उस दिन से ही शुरु हुआ, जिस दिन श्रीराम प्रभु अपनी पत्नि सीताजी और अनुज लक्ष्मण जी के साथ चौदह बरस का बनवास बीताकर अयोध्या लौटे थे. इस धरती पर वे पहले पुरुष थे, जिनके आगमन पर इतना भव्य स्वागत किया गया और दीप प्रज्जवलित कर उनकी अगवानी की गई. इतिहास में ऎसी घटना और कहीं नहीं देखी-पायी गई और न ही लिखी गई.

4 **देशभक्त वीरांगनाएँ**

सन 1857 से 1947 तक स्वाधीनता की अलख जगाने और इस संग्राम में अपने प्राण की बाजी लगाने वालों में केवल पुरूष-वर्ग ही शामिल नहीं हुआ था, बल्कि अनेकानेक महिलाओं ने इसमें बढ-चढकर भाग लिया था. लखनऊ की बेगम हजरतमहल, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, लखनऊ की तवायफ़ हैदरीबाई, ऊदा देवी, आशा देवी, नामकौर, राजकौर, हबीबा, गुर्जरी देवी, भगवानी देवी, भगवती देवी, इन्द्रकौर, कुशल देवी, रहीमी गुर्जरी,, तुलसीपुर रियासत की रानी राजेश्वरी देवी, अवध की बेगम आलिया ,अवध के सलोन जिले के सिमरपहा के तालुकदार वसंतसिंह बैस की पत्नी और बाराबंकी के मिर्जापुर रियासत की रानी तलमुंद कोइर, सलोन जिले में भदरी की तालुकदार ठकुराइन सन्नाथ कोइर, मनियापुर की सोगरा बीबी , धनुर्विद्या मे माहिर झलकारीबाई, कानपुर की

तवायफ़ अजीजनबाई, अप्रतिम सौंदर्य की मल्लिका मस्तानीबाई, नाना साहब की मुंहबोली बेटी मैनावती, मुज्जफ़रपुर के मुंडभर की महावीरी देवी, अनूप शहर की चौहान रानी, रामगढ की रानी अवन्तीबाई, जैतपुर की रानी, तेजपुर की रानी चौहान, बिरसा मुंडा के सेनापति गया मुण्डा की पत्नी माकी, मणिपुर की नागा रानी गुइंदाल्यू, कोमिल्ला की दो स्कूली छात्राएं-शांति घोष तथा सुनीता चौधरी, मध्य बंगाल की सुहासिनी अली, रेणुसेन, क्रांतिकारी भगवतीचरण वोहरा की पत्नि दुर्गा देवी बोहरा (दुर्गा भाभी), सुशीला दीदी, भारत कोकिला सरोजनी नायडु, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, अरूणा आसफ़ अली, सुचेता कृपलानी, ऊषा मेहता, कस्तुरबा गांधी, सुशीला नैयर, इन्दिरा गांधी, श्रीमती विजयालक्षमी पंडित, कैप्टन लक्ष्मी सहगल, ले.मानवती आर्या सहित लन्दन में जन्मी एनीबेसेन्ट, भारतीय मूल की फ़्रांसीसी नागरिक मैडम भीकाजी कामा, आयरलैण्ड की मूल निवासी और स्वामी विवेकानन्द की शिष्या मारग्रेट नोबुल(भगिनी निवेदिता), इंग्लैण्ड के ब्रिटिश नौसेना के एडमिरल की पुत्री मैडेलिन, ब्रिटिश महिला म्यूरियल लिस्टर और भी न जाने कितनी ही अनाम महिलाओं ने भारत की आजादी के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया था. इन वीरांगनाओं के अनन्य राष्ट्रप्रेम, अदम्य साहस, अटूट प्रतिबद्धता और गौरवमयी बलिदान का इतिहास एक जीवन्त दस्तावेज है. हो सकता है उनमें से कईयों को इतिहास ने विस्मृत कर दिया हो, पर लोकचेतना में वे अभी भी मौजूद हैं. ये वीरांगनायें प्रेरणा स्त्रोत के रूप में राष्ट्रीय चेतना की संवाहक है और स्वतंत्रता संग्राम में इनका योगदान अमूल्य एवं अतुल्य है.

झांसी की महारानी लक्ष्मीबाई को याद करते हुए.

संसार के इतिहास में कदाचित विरले ही उदाहरण इस तरह की स्त्रियों के मिलेंगे, जिन्होंने अपनी छोटी सी उम्र में अलौकिक वीरता और असाधारण युद्ध-कौशल के साथ किसी भी देश की स्वाधीनता के लिए युद्ध किया हो और अपने आदर्शों के लिए लडते-लडते युद्ध क्षेत्र में प्राण त्याग दिए हों, निःसन्देह वह नाम **महारानी लक्ष्मीबाई** का है. उनका व्यक्तिगत जीवन जितना पवित्र और निष्कलंक था, उसकी मृत्यु भी उतनी ही वीरोचित थी.

अंग्रेजों की हडप नीति के तहत डलहौजी ने झांसी को हडपने का प्रयास किया. उसने रानी लक्ष्मीबाई के दत्तक पुत्र दामोदर राव को रियासत का कानूनी उत्तराधिकारी मानने से इन्कार कर दिया. रानी ने इसके खिलाफ़ लंदन में अपील की और जो कदम उठाया वह बेमिसाल था. वह मुकदमा हार गयीं, लेकिन उस समय भारत के ब्रिटिश शासक उनके “धृष्टतापूर्ण व्यव्हार” के लिए उन्हें सबक सिखाना चाहते थे. उन्होंने रियासत के आभूषण जब्त कर लिए और उनके पति के कर्ज की रकम को सालाना पेंशन में से काटना शुरु कर दिया. उन्हें झांसी का

किला छोडकर झांसी शहर के रानी महल में जाने का आदेश दिया गया. लेकिन रानी झांसी लक्ष्मीबाई ने तो आखिरी दम तक लोहा लेने की ठान ली थी. उन्होंने जिन शब्दों में अपने फ़ैसले की घोषणा की वे अमर हो गये हैं. उन्होंने कहा;- **मी माझी झांसी नहीं देहनार** (मैं अपनी झांसी देने वाली नही हूँ.)

सन 1857 में हिंसा भडकने के साथ ही **झांसी** विद्रोह का केन्द्र बन गया था. रानी लक्ष्मीबाई ने झांसी की सुरक्षा को सुदृढ करने के प्रयास शुरू कर दिये और स्वयंसेवकों की सेना खडी कर दी. यह बात ध्यान देने की है कि *उनके अंगरक्षक बडॆ निष्ठावान मुसलमान सैनिक थे.* सैकडों स्थानीय लोग स्वेच्छा से शाही सेना में शामिल हुए. पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं को भी सेना में भर्ती किया गया और सैन्य प्रशिक्षण दिया गया. महिला टुकडी की एक अफ़सर झलकारी बाई ने रानी लक्ष्मीबाई की जान बचाने के लिए अपना जीवन बलिदान कर अद्वितीय वीरता का परिचय दिया. बहादुरी से दुश्मन का सामना करते हुए लक्ष्मीबाई कालपी पहुंची और उन्होंने तात्या टॊपे तथा नाना साहब के भतीजे राव साहब की सेनाओं के साथ अपनी सेना को नये सिरे से संगठित किया. उनकी साझा सेना ने अंग्रेजों की सेना से जमकर लोहा लिया. उन्होंने ब्रिटिश सेना के ठिकानों पर बडी तेजी और जोश से हमले किये. लेकिन भाग्य ने उनका साथ नहीं दिया. 4 अप्रैल 1858 को कालपी पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया. जून के मध्य तक ब्रिटिश सेनाओं का ग्वालियर पर फ़िर से नियंत्रण हो चुका था और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने रणभूमि मे लडते हुए वीरगति प्राप्त की. लेकिन लोकगाथाओं और भारत के देशभक्ति के साहित्य में वे सदा अमर रहेंगी. कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने उनका बखान अपनी कविता में इस प्रकार किया है.

चमक उठी सन सत्तावन में
वह तलवार पुरानी थी
बुंदेले हरबोलों के मुंह
हमने सुनी कहानी थी.
खूब लडी मरदानी, वह तो
झांसी वाली रानी थी.

5

बुढ़ापा खुद एक समस्या है.

यदि हम अपने शरीर की तुलना किसी किले से करें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी. जिस तरह से एक नव-निर्मित किला मजबूत होता है कि वह हर तरह के मौसम की मार झेल सकता है. भीषण बरसात को सह सकता है. कड़कड़ाती बिजली का झटका सह सकता है. यह सब एक निर्धारित सीमा के भीतर ही होता है. जैसे-जैसे किला पुराना होता चला जाता है, उसका आधार भी कमजोर होने लगता है. पलस्तर झड़ने लगता है. फ़िर ईंटे खिसकने लगती है. बरसात का पानी जगह-जगह समाने लगता है और एक समय ऎसा भी आता है कि उसका एक-एक हिस्सा गिरने लगता है और एक दिन वह जमींदोज हो जाता है.

ठीक इसी तरह हमारे शरीर का किला भी एक दिन कमजोर होने लगता है. शरीर के कमजोर होते ही अनेकानेक समस्याएं उठ खड़ी होती है. आदमी जानता है कि अधिक समय तक वह युवा बना नहीं रह सकता. एक न एक दिन बुढ़ापा आएगा ही. यह निश्चित है. अकाट्य सत्य है. जिसे झुठलाया नहीं जा सकता. जानने-बूझने के बावजूद वह लापरवाह बना रहता है और एक समय ऎसा आ जाता है कि वह असहाय बन जाता है. हड्डियां गलने लगती हैं. याददाश्त कमजोर होने लगती है. कानों से सुनाई देना कम हो जाता है. कभी-कभी तो कुछ भी सुनाई नहीं देता. आँखें कमजोर होने लगती है. दिखाई देना कम होने लगता है. शारीरिक परेशानियों को झेलते-झेलते वह बात-बात पर झुंझलाने लगता है. उसका स्वभाव चिड़चिडा होने लगता है. शक करने की बिमारी भी आ घेरती है.

इस असहाय अवस्था में लोग साथ देना बंद करने लगते है. परिवार के लोग भी उसकी हरकतों को कुछ दिन तक तो झेलते हैं फ़िर वे भी उससे परेशान से- खींचे-खींचे से रहने लगते है. सबसे बड़ी समस्या तो उस समय होती है जब वह बिस्तर ही पकड़ लेता है. सबसे भीषण और दुखदाई यदि कोई स्थिति है तो वह यही है. कौन कब किस स्थिति में होगा, उसे कौन-कौन से दुख झेलने होंगे ?, आदमी इन्हें नहीं जानता, लेकिन इन हालातों से उसे कभी न कभी गुजरना ही होता है. बचने का कोई उपाय नहीं. आप कितनी ही शक्तिशाली औषधियों का इस्तेमाल कर लें, कितना ही फ़िट रहने की जुगाड़ कर लें, बचाव का कोई रास्ता नहीं है.

हाँ. सभी जानते हैं कि बचने के कोई रास्ते है ही नहीं. यदि ध्यान पूर्वक सोचा जाए तो अनेक ऎसे छोटे-छोटे उपायों को खोजा जा सकता है, जिसके अपनाने से कुछ राहत पायी जा सकती है. यदि उन उपायों को अपनाया जाए, तो निश्चित ही बुढ़ापा, जिसे हम एक आभिशाप समझ बैठे हैं, आसानी से काटा जा सकता है. सबसे पहले तो हमें अपनी आदतें बदलनी होगी. यदि आप शुरु से पेठू रहे हैं तो आपको उतना ही भोजन करना चाहिए, जो आसानी से पच सके. सुबह-शाम खुली प्रकृति में घूमने-टहलने की आदत बना लेनी चाहिए. ताजी हवा जहाँ आपको तरोताजा कर देती है, वहीं वह आपके फ़ेंफ़ड़ों को मजबूती प्रदान करती है. रक्त का संचरण ठीक तरह से होने लगेगा. एकाकी बने रहने की आदत को तिलांजलि दे दी जानी चाहिए. आप ऎसे मित्रों के बीच उठिए-बैठिए जो ऊर्जावान है, गतिशील है, ठोस और सही निर्णय लेने में सक्षम हैं, जिनकी सकारात्मक सोच हो, उनका साथ पकडिए. नकारात्मक सोच वालों से दूरी बना कर रखिए.

हम मनुष्य जाति पर परम पिता परमेश्वर की बड़ी असीम कृपा है कि उसने हमारे शरीर में कुछ अतिरिक्त अंग दे रखे हैं. मसलन- दो दिमाक, दो आँखे, दो कान, दो नथुने, दो लंग्स, पेट में दो आँतें, दो किडनी, दो पैर आदि. मतलब एकदम स्पष्ट है कि यदि एक अंग किसी कारणवश खराब हो जाए, तो दूसरे अंग से वह काम चलता रहेगा. अब यह हम पर निर्भर है कि हम उन्हें किस तरह तंदुरुस्त बनाए रखते हैं.

चीन के प्रसिद्ध दार्शनिक “लाओत्से” जिसने “ताओ” धर्म का प्रतिपादन किया है, वह इशारों- इशारों में काफ़ी कुछ रहस्यमय बातों के माध्यम से मनुष्य को चेताते रहते हैं. एक जगह उन्होंने शरीर को कंप्युटर से तुलना करते हुए कहा कि आदमी का दिमाक भी किसी कम्प्युटर से कम नहीं है. हम उसमें अनेकानेक नेगेटिव विचार डाल देते हैं, जो अपना काम बखुबी करते रहते हैं और उसी के अनुसार परिणाम भी देते रहते हैं. यदि आपने उसमें पाजिटिव विचार डाल दिए हों तो तदानुसार अपना काम करते रहते हैं और आपको हरदम अतिरिक्त ऊर्जा से भर देते हैं. वे

आगे कहते हैं कि हमें समय-समय पर प्रोग्रामिंग करते रहना चाहिए. नेगेटिव विचारों को हटाते रहना चाहिए. एक बड़ा सूत्र वे हमें दे गए हैं. और भी कई ऎसी बातें वे संकेतों में कह गए हैं जो हमारे काम की हैं, अतः उस पर भी गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए, ताकि हमारे ऊर्जा और शक्ति बनी रहे और शरीर स्वस्थ बना रहे.

जरुरी नहीं कि किसी मन्दिर में जाकर घण्टा बजाने की सोचें, गीता-रामायण-भागवत पढ़ने की सोचें. सोचना और करने में जमीन-आसमान का फ़र्क है. यह आपसे नहीं हो सकेगा क्योंकि आपने अपने बाल्यावस्था में अथवा युवावस्था में कभी इन्हें छूने की जरुरत ही नहीं समझी. यह आपकी आदत का कभी हिस्सा ही नहीं रहा..लेकिन अब समय ही समय है आपके पास. रामायण- भागवत-गीता जरुर पढें, लेकिन ऎसा पढें कि उसमें डूब जाएं. खूब डूबकर पढें. ऎसा पढें कि आँखों के सामने सारा दृष्य चलायमान हो उठे. सदा प्रसन्न बने रहने की चेष्टा करें. खुश रहें और दूसरों को भी खूश रखें. दूसरों की मदद के लिए हमेशा तैयार रहें.

अच्छे मित्र और अच्छी किताबों से जुड़ें, जो आपको खुश रहने के रास्ते तलाशने में मददगार सिद्ध हो सकते हैं. देशाटन की आदत बनाएं. जिन्दगी भर तो आप दौड़-धूप करते रहे. कभी घर से बाहर निकलने का मौका ही नहीं मिला. यह वह समय होता है जब आपके बेटा-बेटी की शादियां हो चुकी होती है. आप पर घर की कोई जिम्मेदारी बचती नहीं है. एक बार बैठकर प्लान बना लीजिए और निकल पड़िए घर से. आपके नजरों के सामने नया संसार होगा. नए-नए लोग होंगे, नयी-नयी बातें सुनने को मिलेगीं. साथ तलाशने की जरुरत नहीं. आपकी पत्नि से बढ़कर और कौन साथी हो सकता है? उन्हें भी बाहर की दुनिया दिखाइए. जेब मजबूत हो तो विश्व-भ्रमण पर निकल जाइए.

हम भारतवासी अन्य देशों की तुलना में बड़े भाग्यशाली है कि उत्तर से लेकर दक्षिण और पूरब से लेकर पश्चिम तक अनेकानेक तीर्थ स्थल स्थापित हैं. आप अपने बजट के अनुसार यात्रा का ड्राफ़्ट तैयार कीजिए और घर से निकल पड़िए. फ़िर भारत सरकार ने वृद्धावस्था वालों के लिए रेल भाड़े में काफ़ी छूट दे रखी है, उसका फ़ायदा उठाइए. रेल्वे ने पूरे देश को अनेक जोनों में बांट रखा है. सुविधानुसार आप अपनी यात्रा कर सकते हैं. इसके अलावा केन्द्रीय योजना के अंतर्गत कुछ प्रमुख तीर्थस्थलों के लिए “भारत दर्शन” नामक स्पेशल ट्रेन भी चलाई जा रही हैं, जो एक स्टेशन से रवाना होकर आपको उसी स्टेशन तक छोड़ देती है. किराया के नाम पर काफ़ी कम रकम में कई स्थानों का भ्रमण आप कर सकते हैं. इन स्पेशल ट्रेनों में किराये की रकम में ही सुबह की चाय-नाश्ता, दोपहर और शाम का भोजन दिया जाता है. तीर्थ-स्थल तक जाने-आने के लिए लक्जरी बसों की उत्तम व्यवस्था भी इसी में शामिल है.

मध्यप्रदेश के यशस्वी मुख्य मंत्री माननीय श्री शिवराज चौहान जी ने वृद्ध लोगों के लिए निःशुल्क रेल यात्रा का प्रबंध कर रखा है. अब तक लाखों लोगों ने इसका फ़ायदा उठाया है. आप भी इस योजना का फ़ायदा उठा सकते हैं. अगर आपके परिवार में कोई ऐसा सदस्य नहीं है जो आपकी यात्रा में सहयात्री बन सकता है, तो विकल्प के रूप में आप किसी मित्र अथवा सगे-संबंधी को अपना सहायक बनाकर यात्रा कर सकते हैं.

विधाता ने प्रकृति को इतनी सुघड़ता और सुन्दरता से गढ़ा है कि आपकी आँखें खुली रह जाएगी. आप चमत्कृत हो उठेंगे. हर समय, हर क्षण कुछ नया करने की सोचें. यह विचार मन में न लायें कि अपने से कम उम्र के लोगों से कुछ जानने, पूछने में आपकी बेइज्जती हो जाएगी. इस नकारात्मक सोच को तुरंत ही झटक दीजिए. हो सके तो आप कंप्युटर से अथवा ऐंड्राइड फ़ोन से जुड़ जाइए. एक क्लिक करते ही पूरा विश्व आपके सामने उपस्थित हो जाएगा. आप अपनी मन मर्जी से हर छोटी-बड़ी जानकारियों के अलावा काफ़ी कुछ हासिल कर सकते हैं. मन के अंधकारमय बंद कमरों में लगी खिड़कियों को खोलिए और नित नूतन पुनर्नवा होती दुनिया को नयी नजर से देखिए. बुढ़ापा आएगा, उसे कोई नहीं रोक सकता. रोका भी नहीं जा सकता. बस खुश और प्रसन्न रहने का एकमात्र उपाय यही है और यह सोच में भी बना रहना चाहिए कि आप मन-मस्तिस्क से हमेशा सक्रीय बने रहें. आप खुद महसूस करेंगे कि आपसे सुखी और प्रसन्न कोई नहीं हो सकता.

6

भए प्रगट कृपाला दीन दयाला

भए प्रगट कृपाला, दीनदयाला कौसल्या हितकारी
हरषित महतारी, मुनि मन हारी, अद्भुत रूप बिचारी
लोचन अभिरामा,तनु घनस्यामा,निज आयुध भुज चारी
भूषन बनमाला, नयन बिसाला, शोभासिंधु खरारी
कह दुइ कर जोरी, अस्तुति तोरी, केहि बिधि करौं अनंता
माया गुन ग्यानातीत अमाना, बेद पुरान भनंता
करुना सुख सागर, सब गुन आगर, जेहिं गावहिं श्रुति संता
सो मम हित लागी, जन अनुरागी, भयऊ प्रगट श्रीकंता

दोनों हाथ जोड़कर माता बोलीं- हे अन्तरहित ! मैं किस प्रकार आपकी स्तुति करूँ?. वेद और पुराण कहते हैं कि आप माया, गुण और ज्ञान आदि से परे और परिणाम रहित हैं. श्रुति और संतजन जिनको दया और सुख का समुद्र तथा सब गुणों का धाम कहते हैं. वहीं दूसरों से प्रेम करने वाले लक्ष्मीकान्त मेरे हितार्थ प्रकट हुए हैं.

ब्रहमांड निकाया, निर्मित माया, रोम रोम प्रति बेद कहे
मम उर सो वासी, यह उपहासी, सुनत धीर मति थिर न रहै
उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुस्काना, चरित बहु बिधि कीन्ह चहैं
कहि कथा सुनाई, मातु बुझाई, जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै

मात पुनि बोली, सो मति डोली, तजहु तात यह रूपा
कीजै सिसुलीला, अति प्रियसीला,यह सुख परम अनूपा
सुनि वचन सुजाना, रोदन ठाना, होइ बालक सुरभूपा
यह चरित जे गावहिं, हरिपद पावहिं,ते न परहिं भवकूपा

भगवान श्री राम के अवतार लेने के समय पवित्र चैत्र मास के शुक्लपक्ष में नवमी तिथि प्रभु का प्रिय अभिजित नक्षत्र था तथा नवम दिवस न अधिक शीत और न विशेष सूर्य की तपन, बल्कि संसार को विश्राम देने वाला शुभ

दिन था. शीतल मंद और सुगन्धित हवा चल रही थी. देवता हर्षित थे और संतों के मन में चाव था. वन फ़ूले हुए थे. पर्वत-समूह मणियों से युक्त हो रहे थे और संपूर्ण नदियाँ अमृत की धारा बहा रही थी. ऎसे सुन्दर और मनमोहक वातावरण में प्रभु श्रीराम इस धरती पर अवतरित हुए.(*) वेद कहते हैं कि आपके प्रत्येक रोम में माया के रचे हुए ब्रह्मांड के समूह हैं. वही आप मेरे हृदय में रहें. यह हंसी की बात सुन धीर पुरुषों की बुद्धि भी स्थिर नहीं रहती. जब माता को ज्ञान पैदा हुआ, तब प्रभु मुस्कुराए. वे बहुत प्रकार की लीला करना चाहते हैं. इसीलिए सुन्दर कथा कह माता को समझाया,जिससे पुत्र-प्रेम प्राप्त हो(*) माता की वह बुद्धि पलट गई, तब वह फ़िर बोलीं-हे तात! यह रूप त्याग कर अति प्रिय बाल-लीला करो, यह सुख बड़ा अनुपम होगा. यह वचन सुनकर सुजान देवेश्वर ने बालक होकर रोना प्रारम्भ किया. तुलसीदास जी कहते हैं कि जो इस चरित्र को गाते हैं, वे श्री हरि का पद पाते हैं और संसार-कूप में नहीं गिरते.

उपरोक्त छंदों को पढ़ते हुए मन गदगद हो उठता है. नेत्रों से आंसू झरने लगते हैं. शरीर पुलकित हो उठता है. मेरे अपने मतानुसार अब तक किसी भी भक्त कवि ने श्रीराम के जन्मोत्सव को लेकर इतनी सुन्दर रचना शायद ही की होगी. जब तक श्री हरि की कृपा नहीं होगी,सरस्वती उसकी जिव्हा में कैसे विराजमान हो सकती है?.

रामभक्त तुलसीदासजी प्रभु श्रीराम के जन्म के समय प्रकृति चित्रण का वर्णन बड़े ही मनोहरी ढंग से किया है. इसकी पूर्व की चौपायी में वे रावण के अत्याचारों का वर्णन करते हैं. आगे की पंक्तियों में वे देवताओं और ऋषि मुनियों के संग क्षीरसागर के तट पर जाकर श्री हरि से प्रार्थना करते हैं कि वे शीघ्र ही अत्याचारी रावण से मुक्ति दिलावें. भक्ति से प्रसन्न होकर श्री विष्णु प्रकट होते हैं और सभी को धीरज बंधाते हुए कहते हैं कि -**जानि डरफु मुनि सिद्द सुरेशा* तुम्हहि लागि धरिहउँ नर बेसा* अंसन्ह सहित अमुज अवतारा*लेहउँ दिनकर बंस उदारा -** हे मुनियों, सिद्धों तथा देवताओं ! मैं तुम्हारे कारण मानव शरीर धारण करूंगा. तुम भय मत करो. मैं उदार सूर्यकुल में अपने अशों के साथ मनुष्य अवतार धारण करुंगा.

भक्त कवि तुलसीदास जी ने ऋषि,मुनियों एवं समस्त देवताओं के मुख से श्रीहरि की जो स्तुति की है, वह अतुलनीय है**. जय जय सुरनायक से लेकर नमत नाथ पद कंजा** पढ़ते हुए शरीर में रोमांच हो आता है. नयनों से अश्रु बह निकलते हैं, वाणी गंभीर हो जाती है. और लगने लगता है कि हम भी उस पंक्ति में जा खड़े हुए हैं,जहां इतनी सुन्दर स्तुति हो रही होती है.

तुलसीदास जी जिस वातावरण में मानस की रचना कर रहे थे, वह समय संकट का समय था. उन्होंने वक्त की नजाकत को देखते हुए श्रीराम जी को केन्द्र में रखकर पूरा मानस रच डाला. श्री रामजी के अलावा कई अन्य पात्र भी इसमें आते हैं, उन्होंने उनके बारे में काफ़ी संक्षेप में वर्णन किया है. यहां विस्तार देने की जरुरत भी नहीं थी. वे तो सिर्फ़ और सिर्फ़ भगवान श्रीराम को एक ऎसे योद्धा के रूप में जनता के बीच लाकर उपस्थित करते हैं कि वे अपनी नीजि दुख भूलकर उनकी शरण में पहुंच जाएं और अत्याचारों का डटकर मुकाबला कर सकें.

वाल्मीक ऋषि राम के समकालीन थे. यह भी संभव है कि राजा दशरथ के राजमहल में उनका आना-जाना रहा हो. इसका लेखा-जोखा तो कहीं मिलता नहीं है. यह सिर्फ़ एक अनुमान भर है. चुंकि वे भी अपने समय के एक कुशल कवि रहे हैं, और उन्होंने जैसा देखा वैसा अपने कवित्त में उतार दिया.

रामायण की रचना

वे वाल्मिक रामायण मे लिखते है कि शत्रुसूदन महातेजस्वी नरेश श्री दशरथजी पुत्रहीन होने के कारण पुत्रप्राप्ति की इच्छा से पुत्रेष्टि यज्ञ कर रहे थे . इसी समय अग्निकुंड से एक विशालकाय पुरुष प्रकट हुआ,जिसके हाथ में तपाए हुए जाम्बूनद नामक सुवर्ण की बनी थाली बहुत बड़ी थी और दिव्य खीर से भरी हुई थी, महाराज दशरथ को देते हुए कहते हैं

इदं तु नृपशार्दूल पायसं देवनिर्मितम*प्रजाकरं गृहान त्वं धन्यमारोग्यवर्धनम
भार्याणामनुरूपाणामश्रीतेति प्रयच्छ वै*तास्सु त्वं लप्स्यासे पुत्रन यदर्थं यजसे नृप
(बालकाण्ड का सोलहवां सर्ग- वालमीकी रामायण श्लोक १८-१९)

नृपश्रेष्ठ ! यह देवताओं की बनायी हुई खीर है, जो संतान प्राप्ति कराने वाली है. तुम इसे ग्रहण करो. यह धन और आरोग्य की भी वृद्धि करने वाली है.(*) राजन ! यह खीर अपनी योग्य पत्नियों को दो और कहो-" तुम लोग इसे खाओ." ऎसा करने पर उनके गर्भ से आपको अनेक पुत्रों की प्राप्त होगी, जिनके लिए तुम यह यज्ञ कर रहे हो.

कौशल्यायै नरपति पायसार्धं ददौ तदा(*)अर्धादर्धं ददौ चापि सुमित्रायै नराधिपः(२७)
कैकेय्यै चावशिष्ठार्थ ददौ पुत्रार्थकारणात(*) प्रददौ चावशिष्ठार्थं पायसस्यामृतोपमम(२८)
अनुचिन्त्य सुमित्रायै पुनरेव महामतिः(*) एवं तासां ददौ राजा भार्याणां पायसं पृथक (२९)

नरेश ने उस समय उस खीर का आधा भाग महारानी कौशल्या को दे दिया. फ़िर बचे हुए आधे का आधा भाग रानी सुमित्रा को अर्पण किया, बाद में जितनी खीर बच रही, उसका आधा भाग कैकेयी को दे दिया. तत्पश्चात उस खीर का जो अवशिष्ट आधा भाग सुमित्रा को अर्पित कर दिया. इस प्रकार नरेश ने अपनी सभी रानियों को अलग-अलग खीर बांटी.

प्रोद्दमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम(*)कौसल्याजनयद रामं दिव्यलक्षणसंयुक्तम

(बालकांड १८ वां सर्ग-श्लोक १०)

छः ऋतुएं बीत गयीं, तब बारहवें मास में चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्न में कौशल्या देवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त, सर्वलोकवन्दित जगदीश्वर श्रीराम को जन्म दिया. उस समय सूर्य, मंगल,

शनि, गुरू और शुक्र- ये पांच ग्रह अपने-अपने उच्च स्थान में विद्यमान थे तथा लग्न में चन्द्रमा के साथ बृहस्पति विराजमान थे.

जगुः कलं च गन्धर्वां ननृत्यश्चाप्सरोगणाः(*) देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिश्च खात पतत.(१७)
उत्सवश्च महानासीदयोध्यायां नजाकुलः(*) रथ्याश्च जनसम्बाधा नटनर्तक्संकुलाः (१८)

इनके जन्म के समय गन्धर्वों ने मधुर गीत गाए. अप्सराओं ने नृत्य किया. देवताओं की दुन्दुभियां बजने लगीं तथा आकाश से फ़ूलों की वर्षा होने लगी. अयोध्या में बड़ा उत्सव हुआ. मनुष्यों की भारी भीड़ एकत्र हुई. गलियां और सड़कें लोगों से खचाखच भरी थी. बहुत से नट और नर्तक वहां अपनी कलाएं दिखा रहे थे.

उन्होंने संस्कृत भाषा में राम के समूचे व्यक्तित्व को सूक्ष्मता से वर्णित किया है. चुंकि रामायण संस्कृत भाषा में रची गई है, अतः जनसामान्य इसे कम ही पढ़ पाते हैं. गीता प्रेस गोरखपुर ने उसका अनुवाद भी दिया है, अतः इसे जरुर पढ़ा जाना चाहिए. तुलसीदास जी ने अवधि में मानस लिखा. भाषा में लोच के साथ-साथ गेय तत्व भी शामिल है, अतः घरों में इसे बड़े चाव के साथ पढ़ा जाता है.

. तुलसीदास जी ने मानस की रचना उस समय की जब इस देश में मुगलों का शासन था. अकबर सहनशील था और आपसी एकता और समरसता का पोषक था, किन्तु उसकी पृष्ठभूमि में स्थायी और मजबूत मुगल शासन की स्थापना ही उसका मकसद था. उस समय हिन्दू और मुस्सलमान आपस में खूब लड़ते थे. उधर शैव, शाक्त्य और वैष्णवों में भी आपसी मतभेद थे. दक्षिण में शिव कांची और वैष्णव कांची बन गए थे. समाज में सामाजिक ऊंच-नीच का भेदभाव चरमोत्कर्ष पर था तथा समाज में वर्गभेद पैदा हो गया था. न केवल समाज, नीति और साहित्य भी इसके शिकार थे.

संतो ने समाज में समरसता की दिशा में काम किया. इस दिशा में तुलसी ने रामचरित मानस की रचना कर परम उल्लेखनीय काम किया. उन्होंने सर्वत्र अपने काव्य में राष्ट्रीय एकता और सामाजिक सौहार्द को ऎसा स्थान दिया कि लोग आपस में मैत्री और सदभाव से जीवन जीने को विवश हुए. तुलसी ने उसके लिए समाज, परिवार,आध्यात्म, कर्म, राजनीति आदि सभी क्षेत्रों को चुना तथा समाज में व्याप्त असमानता, पाप, अनाचार, कटुता और धर्महीनता को दूर करने की कोशिश की. वस्तुस्थिति यह बनी की वे भारतीय समाज के लोकनायक बन गए.

उन्होंने भाषाओं में भी समरसता स्थापित की. अवधी और ब्रज दोनों का समन्वय किया. मानस में हिन्दी, संस्कृत दोनों का प्रयोग है. वर्णिक और मात्रिक सभी छंद है. लेखनी में क्लिष्टता और सरलता की समरसता है. इसमें कथाएं भी हैं और स्तुतियां भी. मानस में पुराण, कथा, इतिहास सभी कुछ है. तुलसी ने समाज को स्नेह, सौहार्द,

ममता, सहानुभूति का अनुपम उपहार दिया है. इसमें कहीं विषमता, वैमनस्य और आपसी कटुता को जगह नहीं दी. यही समरसता समता तुलसी साहित्य की विशेशता है और यही सच्चे भक्त और साधक की पहचान है.

आज वातावरण फ़िर विषाक्त हो गया है. श्री राम का नाम भी अब राजनीति की दृष्टि से देखा जाने लगा है. बावरी मस्जिद के गिरने के बाद उठे विवाद का फ़ैसला भी आ चुका है कि अयोध्या ही श्रीराम की जन्मभूमि है और उस पर भव्य मंदिर बनना चाहिए. लेकिन आज हिन्दू फ़िर असंगठित हुआ है. केवल कुर्सी के चक्कर में पार्टियों में मतभेद बना हुआ है. बहुत कुछ हो रहा है लेकिन यदि राजनीति का चश्मा उतार दिया जाता है तो इसके निर्माण में देर नहीं लगेगी. जिस तरह श्रीराम हिन्दूओं के आराधक देव हैं, उसी प्रकार वे मुस्लिम भाइयों के भी प्रिय हैं. श्री राम कभी किसी के लिए भी अप्रिय हो नहीं हो सकते.

श्रीराम जी के जन्मोत्सव को भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में रह रहे भारतीय बड़ी श्रद्धा और उत्साह के साथ मनाते हैं. श्री राम और श्री कृष्ण हमारी संस्कृति के पितृ-पुरुष हैं. अतः हमारा उत्तरदायित्व बनता है कि हम केवल श्रीराम अथवा श्रीकृष्ण को सब कुछ मानकर पूजा-अर्चना ही नहीं करें बल्कि उनके चत्रित्र को अपने जीवन में उतारते हुए, एक समरस समाज की स्थापना करें, जहां न तो कोई ऊँच हो, न कोई नीच, न कोई अनाचार हो और न ही कोई पाप. केवल और केवल हो तो आपस में भाईचारा हो, सौहार्द प्रेम हो अनन्य प्रेम का भाव भरा हो हम सबके भीतर. क्योंकि मानस में पिता, पुत्र, पति, पत्नी, सास, बहू, भाई-भाई, स्वामी, सेवक के बीच सौहार्द की चर्चा से सारा मानस ओतप्रोत है तो फ़िर हमारे बीच दुर्गुण कैसे पनप सकता है?

---

7 <u>मत्स्यपुराण में नदियों का वर्णन</u>

सप्त चास्मिन महावर्षे विश्रुताः कुलपर्वताः * मेहेन्द्रो मलयः सहयः शुक्तिमानृक्षवानपि
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च इत्येते कुलपर्वताः * तेषां सहस्त्रशश्चान्ये पर्वतास्तु समीपतः
आभिशातास्ततश्चान्ये विपुलाश्चित्रसानवः * अन्ये तेभ्यः परिशाता ह्स्वा ह्स्योपजीविनः
तैर्विमिश्रा जानपदा आर्या मलेच्छाश्च सर्वतः* पीयन्ते यैरिमा नद्धो गंगा सिन्धुः सरस्वती
शतद्रुश्चन्द्रभागा च यमुना सरायूस्तथा * इरावती वितस्ता च विपासा देवेका कुहूः
गोमती धूतपापा च बाहुदा च दृषद्वती
कौशिकी च तृतीया च निश्चीरा गण्डकी तथा* चाक्षुर्लौहिता इत्येता हिमवत्पादनिःसृताः
वेदस्मृतिर्वेत्रवती वृत्रघ्नी सिन्धुरेव च * पर्णाशा चन्दना चैव सदानीरा मही तथा
पारा चर्मण्वती यूपा विदिशा वेणुमत्यपि * शिप्रा ह्यवन्ती कुन्ती च पारियात्राश्रिताः स्मृताः

इस महान भारतवर्ष में सात विश्वविख्यात कुलपर्वत हैं- महेन्द्र (उडीसा के दक्षिण्पूर्वी भाग का पर्वत) मलय सह्य, शुक्तिमान (याह शक्ति पर्वत है, जो रायगढ़ से लेकर मानभूम किले की डालमा पहाड़ी तक फ़ैला है) ऋक्षवान (यह विन्ध्य-पर्वतमाला का पूर्वी भाग है) विन्ध्य, और पारियात्र (याह विन्ध्यपर्वतमाला का पश्चिमी भाग है)- ये कुलपर्वत हैं. इनके समीप अन्य हजारों पर्वत हैं. इनके अतिरिक्त अन्य भी विशाल एवं चित्र-विचित्र शिखरों वाले पर्वत हैं तथा दूसरे कुछ उनसे भी छोंटे हैं, जो निम्न (पर्वतीय) जातियों के आश्रयभूत हैं. इन्हीं पर्वतों से संयुक्त जो प्रदेश हैं, उनमें चारो ओर आर्य एवं मालेच्छ जातियां निवास करती हैं, जो इन आगे कही जाने वाली नादियों का जल पान करती हैं. जैसे गंगा, सिन्धु, सरस्वतेरे, शतद्रु (सतलज), चन्द्रभागा (चिनाव) यमुना, सरयू, इरावती (रावी), वितस्ता (झेलम), विपाशा (व्यास), देविकाम कुहू, गोमती, घूतपापा (धोपाप) बाहुदा, डुषद्वती, कौशिकी (कोसी), तृतीया, निश्चीरा, गण्डकी, चाक्षु, लौहित- ये सभी नदियां हिमालय की उपत्यका (तलहटी) से निकली हुई हं. वेदस्मृति, वेत्रवती (बेतवा), वृत्रघ्नी, सिन्धु, पर्णासा, चन्दना, सदाअनेरा, मही, पारा, चर्मवती, यूपा, विदेशा, वेणुमती, शिप्रा, अवन्ती तथा कुन्ती- इन नदियों का उद्गमस्थल पारियात्र पर्वत है.

शोनो महानदी चैव नर्मदा सुरसा क्रिया
मन्दाकिनी, दशार्णा च चित्रकूटा तथैव च * तमसा पिप्पली श्येनी करतोया पिशाचिका
विमला चंचला चैव वंजुलोआ वालुवाहिनी
शुक्तिमान्ती शुनी लज्जा मुकुटा ह्रदिकापि च * ऋक्षवन्तप्रसूतास्ता नध्योऽमलजलाः शुभाः
तापी पयोष्णी निर्विन्ध्या क्षिप्रा च निषधा नदी* वेणवा वैतराआआअणी चैव विश्वमाला कुमुद्वती
तोया चैव महागौरी दुर्गा चान्तःशिला तथा * विन्ध्यपादप्रसूतास्ता नद्दः पुण्याजलाः शुभाः
गोदावरी भीमरथी कृष्णवेणी च वंजुला
तुंगभद्रा सुप्रयोगा वाह्या कावेर्यथापि च * दक्षिणापथनद्दस्ताः सह्यपादाद विनिःसृता.
कृतमाला ताम्रपर्णी पुण्यजा चोत्पलावती * मलयान्निःसृता नद्दः सर्वा शीतजलाः शुभाः
त्रिषामा ऋषिकुल्या च इक्षुला त्रिदिवाचला * लांगलिनी वंशधराः महेन्द्रतनयाः स्मृताः
ऋषीका सुकुमारी च मन्दगा मन्दवाहिनी * कृपा पलाशिनी चैव शुक्तिमत्प्रभवाः स्मृताः
सर्वाः पुण्यजलाः पुण्या सर्वाश्चैव समुद्रगाः * विश्वस्य मातरः सर्वा सर्वपापहराः शुभाः

शोण, महानदी, नर्मदा, सुरसा, क्रिया, मन्दाकिनी, दशार्णा, चित्रकूटा, तमसा, पिम्पाली, श्येनी, करतोया, पिशाचिका, विमला, चंचला, वालुवाहिनी, शुक्तिमन्ती, शुनी, लज्जा, मुकुटा अग्र ह्रदिका- ये स्वच्छसलिला कल्याणमयी नदियां ऋक्षवन्त (ऋक्षवान) पर्वत से उद्भूत हुई हैं. तापी, पयोष्णी (पूर्णा नदी या पैनगंगा), निर्विन्ध्या, क्षिप्रा, निषधा, वेण्या, वैतरणी, विश्वमाला, कुमुद्वती, तोया, महागौरी, दुर्गा तथा अन्तःशिला- ये सभी पुण्यतोया मंगलमयी नदियां विन्ध्याचल की उपत्यकाओं से निकली हुई हैं. गोदावरी, भीमरथी, कृष्णचेव्णी, वंजुला (मंजीरा), कर्नाटक की तुंगभद्रा, सुप्रयोगा, वाध्या (वर्धा नदी) और कावेरी- ये सभी नदियां दक्षिणापथ में प्रवाहित होने वाली नदियां हैं, जो सहयपर्वत की शाखाओं से प्रकट हुई हैं. कृतमाला (वैगईन नदी) ताम्रपर्णी, पुष्पजा (पेन्नार नदी) और उत्पलावती- ये कल्याणमयी नदियां मलयाचल से निकली हुई हैं. इनका जल बहुत शीतल होता है. त्रिषामा, ऋषिकुल्या, इक्षुला, त्रिदिवा, अचला, लांगालिनी और वंशधारा - ये सभी नदियां महेन्द्र पर्वत से निकली हुई

मानी जाती है. ऋषीका, सुकुमारी, मन्दगा, मन्दवाहिनी, कृपा और पलाशिनी- इन नदियों का उद्‌गम शुक्तिमान पर्वत से हुआ है. ये सभी पुण्यतोया नदियां पुण्यप्रद, सर्वत्र बहने वाली तथा साक्षात य परम्परा से समुद्रगामिनी हैं. ये सब-की-सब विश्व के लिए माता-सदृश हैं तथा इन सबको कल्याणकारिणी एवं पापहारिणि माना गया है.(२५-३३)

8 कब सजेगी हिन्द के माथे पर हिन्दी की बिंदी.

अगस्त का महिना आजादी का जश्न मनाने का महिना है. इस दिन हम देश के स्वतंत्र होने की खुशिया मनाते हैं, जश्न में शामिल होते हैं. तब देश की गरीबी, अशिक्षा, बालश्रम, भुखमरी और आर्थिक पिछड़ापन जैसे कई सवाल मुंह बाएं हमारे सामने खडे रहते है. इन ज्वलंत समस्याओं से देश कैसे उभरे? ऎसा ही एक सवाल देश की भाषा का भी अभी तक हल नहीं हो पाया है. सीधे-सीधे शब्दों में कहें तो हिन्दी आज भी हमारी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई. अंग्रेजी रानी के साथ पटरानी के रूप में संविधान में विराजमान है. केन्द्रीय कार्यालयों में अंग्रेजी राज कर रही है. इसके बिना हमारे समाज की विद्‌वता सामने नहीं आ पाती और उसे बोले बिना हम आगे नहीं बढ़ पाते. एक तरफ़ हम भारतीय संस्कृति की बात करते हैं लेकिन भाषा के नाम पर अंग्रेजी की मानसिकता से बाहर निकल नहीं पाते. आज का सबसे बड़ा सवाल यही है कि हम कब इस भाषाई परतंत्रता से स्वयं को आजाद महसूस करेंगे?

अंग्रेजों की क्रूरता से प्रताड़ित गांधी जी ने अफ़्रीका ले लौटते समय सन 1909 में "हिन्द-स्वराज" नामक एक छॊटी सी पुस्तिका लिखी, जिसमें यह चिन्तन प्रमुखता से था कि देश को कैसे आजाद करवाया जाए?. उन्होंने अपने गुरू गोपाल कृष्ण गोखले जी से इस बाबत चर्चा की. उन्होंने गांधीजी को सलाह दी कि सबसे पहले आप पूरे भारत का दौरा करें, ऎसा करने से तुम्हें वे सूत्र मिल जाएंगे, जिसके सहारे तुम्हें आगे बढ़ने में सहायता मिलेगी. गांधीजे ने ऎसा ही किया और पाया कि हिन्दी ही एकमात्र ऎसी भाषा है जिसे अन्य प्रदेशों के भाषा-भाषी समझ सकते हैं. इसी सूत्र को आगे बढ़ाते हुए हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए 1918में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास(चैन्नई) में स्थापित हुई. 1936 को वर्धा में गांधीजी के निवास पर इस समिति की पहली साधारण बैठक हुई जिसमें डा.श्री राजेन्द्र प्रसादजी- अध्यक्ष, सेठ जमनालाल बजाज- उपाध्यक्ष, श्री मोटूरी सत्यनारायण- मंत्री और श्रीमन्नानारायण अग्रवालजी को संयुक्त मंत्री बनाया गया. दूसरी दो बैठकें 12.04.1942 तथा 21.06.1942 को हुईं जिसमें हिन्दी की जगह "राष्ट्रभाषा" शब्द लेने का प्रस्ताव पास हुआ. 12.07.1942 को सेवाग्राम में गांधीजी की कुटी में नवगठित राष्ट्रभाषा प्रचार समिति" की पहली बैठक हुई. राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन ने अध्यक्ष का आसान ग्रहण किया. श्री भदन्त कौसल्यायनजी को मंत्री और श्री रामेश्वर दयाल दुबेजी को सहायक मंत्री बनाया गया. इसी दिन से यह समिति पूरे भारतवर्ष में निरन्तर काम कर रही है.

एक नवम्बर 1956 को नए मध्यप्रदेश का गठन हुआ. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का कार्यालय इन्दौर से भोपाल स्थानान्तरित हुआ. श्यामला हिल्स भोपाल में हिन्दी भवन का एक विशाल भवन संपूर्ण देश में एक जाना-पहचाना नाम है और उसी के अनुरुप वह हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अग्रणी बना हुआ है. माननीय श्री कैलाशचन्द्र पंतजी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के अध्यक्ष और हिन्दी भवन न्यास के मंत्री हैं. उन्ही की प्रेरणा और मार्गदर्शन में सभी

कार्य विर्विघ्न रूप से संपन्न हो रहे है. हिन्दी भवन से द्विमासिक पत्रिका " अक्षरा" का भी प्रकाशन यहीं से हो रहा है. सन 2018 से यह पत्रिका अब मासिक होने जा रही है.

हिन्दी के प्रचार-प्रसार में न केवल हिन्दी भवन बल्कि अनेकानेक संस्थाएं कार्यरत हैं, बावाजूद इसके हिन्दी आज भी अंग्रेजी के सामने बौनी सिद्ध हो रही है. भारत सरकार को चाहिए कि वह जितनी जल्दी हो सके, हिन्दी को उसका गौरव दिलवाए और उसे उस स्थान पर विराजित करे जिसकी कि वह हकदार है.

9

प्रकृति की अनुपम देन--फ़ूलों की घाटी

फ़ूलों की घाटी (उत्तराखण्ड)

यों तो रंग-बिरंगे पुष्प सर्वत्र पाए जाते हैं, पर नन्दन वन के प्राकृतिक पुष्पोद्दान की छटा ही निराली है. इस उद्दान को लेकर महाभारत में एक प्रसंग आता है. एक बार अर्जुन ने द्रोपदी को कुछ देने की कामना की. कुछ न कुछ लेने के लिए जब अर्जुन जिद करने लगा तो द्रोपदी ने कहा-" यदि आप कुछ लाकर देने की जिद में ही पड़े हैं तो मुझे नन्दन-वन से पारिजात का पुष्प ला दें, जो जल में नहीं, पत्थरों में पैदा होते हैं, जिनकी सुगन्ध कस्तुरी-मृग से भी मादक होती है, जिसका सौंदर्य दिव्य सौंदर्य की अनुभूति करा देता है."

अर्जुन चले और नन्दन वन पहुंचे. वहां के रक्षक से उन्हें युद्ध लड़ना पड़ा, तब कहीं एक फ़ूल दौपदी के लिए ला सके.

महाभारत की यह कथा संभवतः कल्पना अधिक, तथ्य कम जान पड़ता हो, किन्तु यह कल्पना नहीं आश्चर्यजनक रहस्य है कि ऐसा नन्दन वन आज भी इसी भारतभूमि में वैसे ही विध्यमान है जैसी महाभारत में कथा आती है. समुद्र सतह से 13,200 फ़ीट ऊँचा यह हिमालय की गोदी में स्थित आज भी "फ़ूलों की घाटी" के नाम से विश्व विख्यात है.

प्रतिवर्ष हजारों देशी-विदेशी पर्यटक यहाँ पहुँचते और जहाँ, वहाँ की मादक छटा को देखकर मुग्ध होते हैं, वहीं यह आश्चर्य भी है कि 10-15 मील क्षेत्र में प्राकृतिक तौर पर उगते आ रहे इन हजारों प्रकार के चित्र-विचित्र पुष्पों को किसने रौंपा ?. सारे संसार में ऐसा कोई भी स्थान नहीं जहाँ प्राकृतिक तौर पर इतने अधिक, इतने सुन्दर, इतने वर्णों के पुष्प खिलते हों.

विशेषज्ञों का अनुमान है कि यह फ़ूल प्रकृति की उतनी देन नहीं है जितना इस बात की सम्भावना कि यह पौधे अतीत काल में सुनियोजित तरीके से विकसित किए गए हों. सम्भव है यह जो राजोद्दान रहा हो, यह भी सम्भव है कि यहाँ कभी किसी महर्षि का तपोवन रहा हो. जो भी हो- महाभारत काल के बाद यह स्थान उन सैंकड़ों रहस्यों की तरह छुपा ही रहा जिनके लिए प्रतिवर्ष देश-विदेश के सैकड़ों पर्वतारोही आते और हिमालय के आश्चर्य खोजने का प्रयत्न करते हैं.

जहाँ अनेक धार्मिक व्यक्तियों का यह विश्वास है कि हिमालय में राजाओं द्वारा छिपाए हुए खजाने हैं, यज्ञों के बहुमूल्य पात्र, आभूषण और अस्त्र हैं, वहाँ पर्वतारोहियों का यह कथन है कि हिमालय की प्रत्येक वनस्पति औषधि है. जहाँ धार्मिक अग्नियाँ स्थापित हैं, ऐसे-ऐसे गुप्त आश्रम हैं, जहाँ अर्ध-सहत्र आयु के संत-महात्मा समाधिस्थ हैं, वहाँ पर्वतरोहियों ने हिममानव की कल्पना ही हिमालय में नहीं की, उनके पदचिन्ह भी देखे हैं. आदि साधना भूमि होने के कारण यह विश्वास है कि हिमालय में अध्यात्म-विज्ञान की वह अदृष्य तरंगे, वह ज्ञान अब भी विद्ध्यमान है जिसे प्राप्त कर इस भौतिक युग की संपूर्ण जड़वादी मान्यताओं, परम्पराओं, सिद्धांतों को बालू की दीवार की तरह बदला जा सकता है. "पुष्प घाटी" ऐसे-ऐसे रहस्यों की ही पुष्टि का एक प्रमाण है.

इस स्थान की खोज सबसे पहले ब्रिटिशकालीन भारतीय सेना के एक कप्तान ने की थी. उसने यहाँ के सैकड़ों प्रकार के फ़ूलों के बीज एकत्र कर इंग्लैण्ड भेजे. एक पुस्तक भी लन्दन में प्रकाशित की गई, जिसमें इस फ़ूलों की घाटी को प्रकृति का अद्भुत चमत्कार कहकर पुकारा गया. तब से अनेक विदेशी खोजी आते रहे और भटक-भटक कर लौटते रहे. पर इंग्लैण्ड की श्रीमती जान लेग को दुबारा यह स्थान फ़िर मिल गया. उन्होंने यहाँ से लगभग 500 फ़ूलों के बीज इकठ्ठे कर लन्दन भेजे. अब तो वहाँ पहुंचने के की तमाम सुविधाएं हो गई हैं इसलिए कोई भी वहाँ जा सकता है, पर अभी हमारे हिमालय में ऐसा बहुत कुछ है जहाँ तक हम जा सकते. हवाँ जा सके होते और उसके अनन्त रहस्यों में से कुछ का भी पता लगा सके होते तो देखते कि जिन वस्तुओं

के लिए हम विदेशों के आश्रित हैं, दूसरों का मुँह ताकते है वह और उनसे श्रेष्ठ वस्तुएँ हम अपने ही भीतर से निकाल सकते हैं.

तीर्थ-यात्रा और आत्मकल्याण के लिए साधनाओं की दृष्टि से अब हिमालय ही एक पुण्य़ स्थान बचा है. वहाँ चित्ताकर्षक शांति है, अतुलित प्राण और सौंदर्य भरा है. उसमें जो एक बार इस पुष्प घाटी को देख आता है, उसे हिमालय का सौंदर्य भूलता नहीं.

पुष्प घाटी तक पहुँचने के लिए जोशीमठ पहुँचना होता है. वहाँ से बद्रीनाथ को जाने वाली सड़क पर मध्य में गोविन्द घाट पर उतरना पड़ता है. यहाँ से पैदल चढ़ाई है और आगे घाघरिया तक की सात मील की दूरी को पार करने के लिए पूरा एक दिन लग जाता है.

घाघरिया से कुल एक घंटे में मुख्य घाटी पहुँच जाते हैं. उसकी दाहिनी ओर "कुबेर भण्डार" पर्वत और आगे "कामेट चोटी" है. बाईं ओर सप्राष्टांग पर्वतों की चोटियाँ हैं. कामेट झरना सामने ही बहता हुआ मिल जाता है. म्यूण्डर ग्राम पर पहुँचते ही यह "पुष्प घाटी" मिल जाती है और अनेक प्रकार के गुलाब, कुमुदिनी, गुलदाऊदी, सिलपाड़ा, जंगली गुलाब, चम्पा, बेला, जुही और कुछ फ़ूल तो ऎसे हैं जिनके नाम वैदिक साहित्य में हैं पर अब उनकी सही जानकारी करना कठिन है. अंग्रेजों ने इनके नाम "बड आफ़ पमडाइज, ग्लाडेओली, हिमालयन, आरकिड हिबिस्टकम आदि रख लिए हैं. कथीड के सफ़ेद व बैंगनी फ़ूलों के गुच्छे बड़े मोहक लगते हैं. बुरांस फ़ूल तो गुलाब के सौंदर्य को भी मात कर देता है. जब यह बुरांस पूरी तरह अपनी ऋतु में फ़ूलता है तो यह वन नन्दन वन या स्वर्ग से भी सुहावना प्रतीत होता है. कितना ही देखो-- न तो आँखें थकती हैं और न ही वहाँ से हटने का ही जी करता है. वर्ष भर इसी तरह किसी न किसी फ़ूल की शोभा बनी ही रहती है. 3000 से अधिक विभिन्न फ़ूल विभिन्न समय में फ़ूलते-खिलते ही रहते हैं.

ब्रह्म-कमल

ब्रह्म कमल भी यहीं पाया जाता है. कमल जल में ही हो सकता है पर प्रकृति के संसार में क्या बंधन ?. उसने यहाँ पत्थरों में कमल उगाकर दिखा दिया है कि उसकी सत्ता सर्वशक्तिमान है. यह कमल श्वेत रंग का होता है, इसकी सुगन्ध ऎसी जादू भरी होती है कि हल्की-सी महक से

ही अनन्त सुख और शांति का आभास होता है. इसलिए इसका नाम ब्रह्म-कमल पड़ा है. इसे पाकर ही द्रोपदी की इच्छा पूर्ण हुई थी.

फ़ूल कहीं भी हो, वह तो प्रकृति का उन्मुक्त सौंदर्य है. जो लोग अपने घरों के आस-पास थोड़े-से भी फ़ूलों के पौधे लगा देते हैं तो वह स्थान इतना अच्छा और आकर्षक लगने लगता है कि बार-बार वहाँ जाने का मन करता है, फ़िर एक ऎसे प्रदेश में पहुँचकर जहाँ 10 इंच से लेकर 28 इंच ऊँचाई के पौधे केवल फ़ूलों से ही आच्छादित हों, उस स्थान के सौंदर्य का वर्णन ही क्या किया जा सकता है. यह स्थान तो ईश्वर या उस दिव्य आत्मा के समान है, जिसके इस सौंदर्य और आनन्द की अनुभूति तो हो सकती है, अभिव्यक्ति नहीं.

राष्ट्रभाषा हिन्दी : विश्वभाषा हिन्दी

इतिहास गवाह है कि हिन्दी साहित्य एवं भारतीय संस्कृति, आध्यात्म एवं दर्शन ने समूचे विश्व को सदैव आकर्षित किया है. भारतीय वांग्मय का पूरा सांस्कृतिक वैभव हिन्दी के ही माध्यम से जन-जन तक पहुँचा है. हिन्दी का क्षेत्र काफ़ी विस्तृत रहा है. यहाँ तक कि इसमें संस्कृत साहित्य की परम्परा और लोक भाषाओं की वाचिक परम्परा की संस्कृति भी समाविष्ट रही है. स्वतंत्रता संग्राम में भी हिन्दी और लोक भाषाओं ने घर-घर स्वाधीनता की लौ जगाई थी. यह मात्र मुक्ति के लिए नहीं वरन सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा हेतु भी थी. हिन्दी राष्ट्रीय आंदोलनों और भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति की भाषा के रूप में न केवल भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है अपितु विश्व मानव संस्कृति में भी इसकी अपनी सहभागिता रहती है और अपने अनूठे योगदान से समृद्ध भी करती रहती है.

सन 1935 में बेल्जियम में जन्में फ़ादर बुल्के ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार में भारत आए. फ्रेंच-अंग्रेजी, फ़्लेमिश, आयरिश भाषाओं पर अधिकार होने के बावजूद आपने हिन्दी की दिव्यता को पहचाना. उन्होंने न सिर्फ़ हिन्दी सीखी बल्कि संस्कृत सीखकर वे यहीं रच-बस गए और इस तरह वे रामायण के प्रकांड विद्वान भी कहला. "रामकथा-उद्भव और विकास" पर आपने डी.फ़िल की उपाधि प्राप्त की. वे कहते थे-" संस्कृत माँ, हिन्दी गृहणी और अंग्रेजी नौकरानी है".

श्रीमदभग्वदगीता और अभिज्ञानशाकुन्तलम से प्रभावित होकर जे.विल्किंसन व जार्ज फ़ास्टर ने क्रमशः हिन्दी सीखी और इनका अनुवाद अंग्रेजी में किया. सन 1800 के दौरान स्काटलैंड के जान बोधानिक गिलक्रिस्ट ने देवनागरी और उसके व्याकरण पर कई पुस्तकें लिखी. श्री एल.एफ़. रुनाल्ड ने 1873 से 1877 तक भारत प्रवास के दौरान हिन्दी व्याकरण पर महत्त्वपूर्ण कार्य किया और लन्दन से इस इस विषय पर पुस्तक प्रकाशित कराई. इंग्लैण्ड के विद्वान डा.आर.एस. मेक-ग्रेगर कहते हैं- "विदेशी विध्यार्थी यह जानकर प्रायः आश्चर्यचकित रह जाता है कि आज हिन्दी-साहित्य आबदार चमकीले जवाहरातों से ठूँस-ठूँसकर भरा एक ऎसा खजाना है जो निरन्तर बढ़ रहा है". एक अंग्रेज यात्री अपनी भारत यात्रा के भमण के बाद लिखा था-" तीर्थ-स्थानों में, पर्यटन-केन्द्रों में, व्यापारिक मंडियों में साधु-संतों में, सार्वजनिक उत्सवों में, कवि-पंडितों में, राज-दरबारों में आदान-प्रदान की भाषा हिन्दी रही है".

बात सच है कि भाषा का निर्माण टकसाल में न होकर सड़कों पर होता है...चौपालों में होता है...गाँवों के गलियारों में होता है और उसका शिल्प होता है उस देश का आमजन. भाषा की स्मृद्धि एवं संपन्नता के प्रति सजगता, सक्रीयता एवं जागरुकता भी उसी जन पर निर्भर करती है. वही (जन) उसका सर्जक होता है, विध्वंसक होता है और वही जिम्मेदार भी होता है.

भाषा अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम माध्यम है. यह अभिव्यक्ति आमजन की अस्मिता से लेकर राष्ट्र के आगत भविष्य के लिए भी हो सकती है, इसीलिए भाषा का प्रश्न केवल भाषा तक ही सीमित नहीं होता. हम जो भी सोचते है, अपनी मातृभाषा में अभिव्यक्त करते है और यही अभिव्यक्ति हमारी पहचान बनाती है. हमने अपनी स्वतंत्रता की लड़ाई हिन्दी के माध्यम से ही जीती है. आमजन की भाषा की राष्ट्रीय गरिमा को प्रतिष्ठित करना एवं उसे कायम रखना हमारा उत्तरदायित्ब बनता है.

भारत के कोने-कोने में बोली जाने एवं समझी जाने वाली हिन्दी ही एकमात्र भाषा है. सरल और वैज्ञानिक लिपि में लिखी जाने के कारण हिन्दी भाषा अत्यन्त सुव्यवस्थित, संपन्न और लोकप्रिय है. भारत के अधिकांश भागों में प्रयोग किए जाने के कारण हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा का गौरव प्राप्त है. राष्ट्रभाषा के रुप में हिन्दी एक प्रदेश के लोगों को दूसरे प्रदेशों के लोगों से जोड़ती है, एवं संपर्क स्थापित करती है और राष्ट्रीय एकता का भाव जगाती है. हिन्दी की इसी विशिष्टता के कारण हमारे संविधान निर्माताओं ने 14 सितम्बर 1949 को देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को, संघ की राजभाषा के रुप में स्वीकार किया तथा 26 जनवरी 1950 को संविधान में इसका प्रावधान किया.

हिन्दी भाषा की एक नहीं, अनेक खूबियाँ है.

१/- हिन्दी एक सशक्त और सरल भाषा है. (२) हिन्दी देवनागरी लिपि मे ध्वनि-प्रतीकों (स्वर-व्यंजन) का क्रम वैज्ञानिक है (३) इसमे प्रत्येक ध्वनि के लिए अलग चिन्ह है (४) इसमे केवल उच्चारित ध्वनियाँ ही लिखी जाती है.(५) जिस रुप में यह बोली जाती है, उसी रुप में लिखी भी जाती है. (६) हिन्दी जर्मनी की तरह अपने ही प्रत्ययों से नवीन शब्दों का निर्माण कर लेती है. (७) हिन्दी में क्रदंन्त क्रियायों को अधिक ग्रहण किया है, क्योंकि ये बहुत सरल एवं स्पष्ट होती है .(८) हिन्दी की संज्ञा-विभक्तियां सिर्फ़ पांच-सात ही हैं. (९) हिन्दी के सर्वनाम अपने हैं. (१०) हिन्दी में विशेषण के साथ अलग-अलग विभक्ति लगाने की जरुरत नहीं होती. (११) हिन्दी के अपने अव्यय हैं.

स्वाधीन भारत की नींव को सुदृढ़ करने के लिए गांधीजी ने जितने काम किए, उनमें हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का काम भी प्रमुख स्थान रखता है, लेकिन गांधीजी की भाषिक मान्यताओं पर विमर्श करने से पूर्व यह भी जानना आवश्यक है कि क्या गांधीजी से पूर्व हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की आवाज किन लोगो ने उठाई थी? हाँ, गांधीजी से पूर्व हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की कोशिशे की गई थी. प्रख्यात फ़्रांसीसी विद्वान गार्साद तासी ने सन १८५२ के फ़्रांस के अपने भाषण मे हिन्दुओं-हिन्दुस्थानी को हिन्दुस्थान की लोक या सार्वदेशीय़ भाषा के रुप में रखा था. अंग्रेजी के प्रसिद्ध कोश " हिंदुस्थानी जाब्सन" में जिसका प्रकाशन सन १८८६ में लंदन में किया गया था, हिंदुस्थानी को सभी भारतीय मुसलमानों की राष्ट्रभाषा माना गया, फ़िर तो गियर्सन जैसे अनेक लोग हिन्दी के सार्वदेशिक रुप को लेकर आगे आए.

स्वदेशी लोगों में सबसे पहले राजा राममोहन राय ने एक भाषण में संकेत दिया था कि श्री पेठे, जो मुंबई के कालेज में अध्यापक थे, ने मराठी में "राष्ट्रभाषा" नाम की पुस्तक सन १८६४ में लिखी, जिसमें हिन्दी भारत की आवश्यक भाषा के रुप में स्वीकार किया. बंगाल के महान धार्मिक नेता केशवचन्द्र ने अपने "सुलभ समाचार" नामक पत्र में भारत की एकता के लिए हिन्दी अपनाने की पूरी वकालत की थी. यही नहीं, श्री सेन ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सक्रीय सहयोग भी दिया. वैदिक धर्म के अनन्य प्रचारक और विद्वान स्वामी दयानन्द सरस्वती ने, जो पहले संस्कृत में ही प्रचार करते थे, ४८ वर्ष की अवस्था में उन्हीं "सेन" के कहने से हिन्दी सीखी और उसी में सारा कार्य करने लगे. गुजराती के लल्लुजी"लाल" ने हिन्दी के प्रथम व्यवस्थित ग्रंथ " प्रेमसागर" की रचना की. १८७० के आसपास मराठी विद्वान हरिगोपाल पाण्डे ने " भाषा तत्व-दीपिका "संज्ञक" हिन्दी व्याकरण लिखा. प्रख्यात बंगला साहित्यकार बंकिमचन्द्र चटर्जी ने बंगाल के प्रसिद्ध साहित्यिक-पत्र "बंग.दर्शन" में १८१७ में एक आलेख लिखा, जिसमें राष्ट्रभाषा हिन्दी के बारे में अपने विचार दृढ़ता से व्यक्त किए. बंगाली शिक्षाविद भूदेव मुखर्जी ने प्रशासन से टक्कर लेकर बिहार की कचहरियों में नागरी तथा कैथि लिपियों को प्रवेश दिलाया और " "आचार-प्रबन्ध" नामक अपनी पुस्तक में हिन्दी के सभी भारतीय भाषाओं की एकता का साधन-सूत्र बतलाया.

सन १९०० तक आते-आते अनेक बंगाली, मराठी, गुजराती, हिन्दी समर्थकों और प्रचारकों की भीड़ खड़ी हो गई,जिसमे योगेन्द्रनाथ बसु अमृतलाल चक्रवर्ती ,सदाशिवराव, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, सेठ गोविन्ददास आदि प्रमुख हैं. इस प्रयासों से बल पाकर जब राष्ट्रनायक जैसे "महिमंड" व्यक्तित्व के धनी गांधीजी ने हिन्दी भाषा के प्रश्न को राजनैतिक दृष्टि से सामने रखा और उन्हीं के प्रयासों से जब इसे संविधान में "राष्ट्रभाषा" का पद मिला तो यह मान लिया गया कि वे इस क्षेत्र के अपूर्व नेता है.

भारतीय भाषा समस्या के विषय पर गांधीजी के विचार बड़े निर्मल, वस्तुनिष्ठ और पूरी तरह व्यवहारिक हैं. वैसे भी उनके विचार प्रांजल और पारदर्शी होते हैं. जिस स्त्रोतों से उनके भाषा विषयक विचार उपलब्ध होते हैं, उनमें उनके लेखों का प्रमुख स्थान है, जो यंग इण्डिया, हरिजन-सेवक, हरिजन बन्धु आदि मे प्रकाशित हैं. इसके अतिरिक्त कुछ ऎसी सामग्री "इण्डियन होमरुल" जैसे पुस्तकों और तत्कालीन विभिन्न व्यक्तियों को लिखे गए उनके पत्रों से मिली है. गांधीजी ने भाषा विषय में सबसे पहले अपने विचार १९०९ में अपनी पुस्तक "हिन्द-स्वराज" और होमरुल"के १८ वें परिच्छेद में यों व्यक्त किए हैं **" हर एक पढ़े-लिखे हिन्दुस्थानी को अपनी भाषा का, हिन्दु को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को पर्शियन का और सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए. कुछ हिन्दुओं को अरबी और कुछ मुसलमानों को हिन्दी का और कुछ पारसियों को संस्कृत सीखनी चाहिए. उत्तर और पश्चिम में रहने वले हिन्दुस्तानी को तमिल सीखनी चाहिए. सारे हिन्दुस्थान के लिए तो हिन्दी होनी ही चाहिए. उसे उर्दू या नागरी लिपियां जानना जरुरी है. ऎसा होने पर हम अपने आपस में व्यवहार से अंग्रेजी को बाहर कर सकेंगे."** गांधीजी की इन भाषिक मान्यताओं के पीछे लोक-संग्रहक संतुलन का भाव प्रमुख था. लोकभाव को अक्षत और अक्षुण्य रखते हुए उसके लिए वे कारगर तरीका अपनाने की बात कहते थे,

अंग्रेजी जिसे कुछ लोग भ्रम-वश विश्व भाषा समझे बैठे हैं, ऎसा श्रेय पाने की कल्पना भी नहीं कर सकती क्योंकि वह जड़, दुराग्रह, अवैज्ञानिक, अविकसित और अटपटी भाषा है जिसके दोष सदा ही बड़े-बड़े विद्वानों को चिंतित और परेशान करती रही है. आर्थर मेक-डोनल भी कुछ इसी तरह का मत रखते थे. वे कहते हैं-" यूरोपीय लोग 2500 वर्ष बाद इस विज्ञानिक युग में भी वही वर्णमाला का प्रयोग कर रहे हैं जो हमारी भाषा की सभी ध्वनियों को व्यक्त करने में अक्षम है. अभी तक हम उसे अव्यवस्थित वर्णक्रम से चिपके हुए हैं. सर आर्थर विलियम जोन्स भी कहते हैं-" अंग्रेजी वर्णमाला और वर्तनी ऎसी बुरी तरह अधकचरी है कि प्रायः अत्यंत हास्यास्पद तक हो जाती है. दस कदम आगे बढ़ते हुए रिचर्ड लैडरर महाशय ने तो झल्लते हुए यहाँ तक कह डाला था "क्रेजी इंग्लिश" और उन्होंने "पागलपन की भाषा अंग्रेजी" नामक एक ग्रंथ ही लिख डाला.

संसार में कुल मिलाकर लगभग 2800 भाषाएं हैं. इनमे 13 ऎसी भाषाएं हैं, जिनके बोलने वालों की संख्यां 8 करोड से अधिक है. ताजा अंकडों के अनुसार संसार की भाषाओं में, हिन्दी भाषा को द्वितीय स्थान प्राप्त है. भारत के बाहर वर्मा, श्रीलंका, फ़ीजी, मलाया, दक्षिण और पूर्वी अफ़्रीका में भी हिन्दी बोलने वालों की संख्या ज्यादा है. एशिया महादेश की भाषाओं में हिन्दी ही एक ऎसी भाषा है, जो अपने देश के बाहर भी बोली और लिखी जाती है, क्योंकि यह एक जीवित और सशक्त भाषा है.

ताजा आंकड़ों के अनुसार भारत में हिन्दी जानने वालों की संख्या सौ करोड़ है. भारत के बाहर पाकिस्थान, इजराइल,ओमान, इक्वाडोर, फ़िजी, इराक, बांगलादेश, ग्रीस, ग्वालेमाटा, म्यांमार, यमन, त्रिनीदाद, सउदी अरब, पेरु, रुस, कतर,, मारीशस, सूरीनाम, गुयाना, इंग्लैण्ड आदि में बोली जाती है. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी को राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा की मान्यता मिलने जा रही है. वर्तमान में अंग्रेजी, फ़्रेंच, चीनी, रुसी एवं स्पेनिस भाषाओं को राष्ट्रसंघ की मान्यता प्राप्त है.

संसार में हिन्दी ही एक ऎसी भाषा है, जिसे विदेशियों ने सर्वप्रथम विश्वपटल पर रखा. हिन्दी के शोधार्थी डा.जुइजिपियोतैस्सी तोरी ने फ़्लोरेंस विश्वविद्धयालय इटली में रामचरितमानस और वाल्मीकि रामायण का तुलनात्मक अध्ययन 1911 में शुभारंभ किया. भारत की संस्कृति ने उन पर इतना असर डाला कि स्वदेश "इटली" छोडकर जीवनपर्यंत बीकानेर में रहे. साम्यवादी देशों में तुलसीकृत रामचरित मानस की लोकप्रियता देख, स्टालिन ने द्वितीय विश्वयुद्ध के समय अकादमीशियन अलकसई वरान्निकोव द्वारा रुसी भाषा में पद्दानुवाद कराया, जिसमें साढ़े दस वर्ष लगे. तुलसीभक्त वेल्जियम में जन्में फ़ादर रेवरेण्ड कामिल बुल्के जिन्होंने हिन्दी के कारण भारत की नागरिकता ली. तुलसी की काव्यकृति हनुमानचालीसा का रोमानियन भाषा में, बुकारेस्ट में प्रो. जार्ज अंका ने डा. यतीन्द्र तिवारी के सहयोग से अनुवाद किया.

अमेरिका के कई विश्वविद्दालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है. यथा- पेनस्टेटयेल, लायोला, शिकागो, वाशिंगटन, ड्यूक, आयोवा, ओरेगान, मिशिगन, कोलंबिया, हवाई इलिनाय, अलवामा, युनिवर्सिटी आफ़ बर्जिनिया, युनि.आफ़ मीनेसोटा, फ़्लोरिडा, वैदिक वि.वि.सिराक्यूज, केलिफ़ोर्निया वि.वि., वर्कले युनिवर्सिटी आफ़ टेक्सास, रटगर्स, एमरी, नार्थ केरोलाइना स्टेट,एन.वाय.यू.इन्डियाना, यूसीएलए, मेनीटावा,लाट्रोव तथा केलगेरी विश्वविद्धालय आदि जहां हिन्दी की शिक्षा दी जाती है.

आधुनिक चीन में हिन्दी की विधिवत शुरुआत सन 1942 में यूनान प्रांत पूर्वी भाषा और साहित्य कालेज में हिन्दी विभाग की स्थापना के साथ हुई. यह वह समय था जब सारा संसार द्वितीय विश्वयुद्ध की चपेट में था. ऎसी स्थिति में अपनी सुरक्षा के लिए हिन्दी विभाग एक जगह से दूसरी जगह स्थानांतरित होता रहा. तीन वर्षों बाद सन 1945 में हिन्दी विभाग यूनान प्रांत से स्थान्तरित होकर छौंगछिन में आ गया और साल भर बाद हिन्दी चीन की राजधानी में स्थित पीकिंग वि.वि. के विदेशी भाषापीठ में आसीन हुई और तबसे यहीं फ़ूलती-फ़लती रही. यहां हिन्दी के अलावा संस्कृत, पालि, और उर्दू भाषा साहित्य का अध्ययन-अध्यापन होता है. 1939 से 1959 तक का समय विकास की दृष्टि से बेहतरीन रहा. बाद के वर्षो में काफ़ी शिथिल पडा.. 1960-1979 तक का समय चीनी जनता और समाज के कठिनाइयों भरे दिन थे, हिन्दी विभाग सिकुडकर छोटा हो गया. 1980-1999 का यह दौर परिवर्तन का दौर रहा. हिन्दी की मशाल को प्रज्जवलित करने में तीन प्राध्यापकों का योगदान विस्मृत नहीं किया जा सकता. वे हैं प्रो.यीनहृयुवैन, प्रो.लियो आनवू और प्रो. चिनतिंनहान. इन तीनो विद्वानों ने अपनी लगन ,कर्मठता और आदर्श के बल पर हिन्दी के लिए जितना कार्य किया वह प्रेरणादायक है.

जापान में विदेशी भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन के दो प्रमुख केन्द्र हैं. तोक्यो युनि. आफ़ फ़ारेन स्टडीज एवं ओसाका युनि.आफ़ फ़ारेन स्टडीज. इन दोनों ही वि.वि. में सन 1011-1021 से ही हिन्दुस्थानी भाषा के रुप में हिन्दी-उर्दू की पढाई का सिलसिला प्रारंभ हो गया था. इसकी नींव डालने वाले विद्वान श्री.प्रो.रेइची गामो तथा प्रो.एइजो सावा हैं. 1911 में डिग्रीकोर्स आफ़ हिन्दुस्तानी एण्ड तमिल शुरु हो गया था. सन 1909 से 1914 के मध्य प्रसिद्ध सेनानी मोहम्मद बरकतउल्ला इस विश्वविद्धालय में "हिन्दुस्थानी भाषा" के विजिटिंग प्रोफ़ेसर के रुप में नियुक्त किए गए. ये दोनो वि.वि. सरकारी विश्वविद्धयालय हैं, जहाँ 4 वर्षीय पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं. आरम्भ में प्रो. देई ने तोक्यो में तथा प्रो.एइजो स्ववा ने ओकासा में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन की नींव डाली. ये विद्वान प्रोफ़ेसर हिन्दी के साथ ही उर्दू भी पढ़ाते थे. सन 2003 में सूरीनाम में आयोजित सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में प्रो. तोसियो तनाका का "विश्व हिन्दी सम्मान" से सम्मानित किया गया

तोकियो और ओसाका के राष्ट्रीय वि.वि. के अतिरिक्त अन्य कई गैर सरकारी वि.वि. और शिक्षा संस्थान भी हैं, जहाँ वैकल्पिक विषय के रुप में प्रारंभिक और माध्यमिक कक्षाओं तक हिन्दी पढ़ने-पढ़ाने की व्यवस्था है. ताकुशोक वि.वि. के प्रो. हेदेआकि इशिदा, सोनोदा वीमेन्स युनिवर्सीटी के प्रो. उचिदा अराकि और ताइगेन हशिमोतो, तोमाया कोकुसाई वि.वि. के प्रो. शिगोओ अराकि और मिताका शहर में स्थित एशिया-अफ़्रीका भाषा के प्रो. योइचि युकिशिता का नाम अत्यंत प्रसिध्द है.

मारिशस में भारतीय मजदूरों के आगमन के साथ ही इस भूमि पर हिन्दी का प्रवेश हुआ. जिन मजदूरों को भारत के भोजपुर इलाके से यहाँ लाए गए थे "गिरमिटिया" कहलाए. वे अपने साथ झोली में रामचरित मानस, हनुमानचालिसा, महाभारत जैसे पवित्र ग्रंथ लेकर आए. इन्हें विरासत में समृद्ध साहित्य, धर्म, और संस्कृति का ज्ञान था. अपनी जमीन से उजड़े-उखड़े इन मजदूरों को नयी जमीन, यातना शिविर में अपने को जीवित रखने, स्थापित करने और अपनी अस्मिता को बनाए रखने के लिए भोजपुरी और हिन्दी का सहारा ही सबसे बड़ा अवलंबन था. मजदूरी की क्रूर नियति से दुखी और हताश ये मजदूर, कभी विरहा, कभी कजरी तो कभी हनुमानचालीसा की पंक्तियों से अपनी आंतरिक शक्ति बचा रखने और रात में रामचरितमानस का पाठ उनकी थकान मिटाकर हौसला बढ़ाते. कई अवरोधों के बावजूद बैठकें चलती और भाषा के साथ संस्कृति और धर्म को गति देते रहे. हिन्दू महासभा, आर्यसभा, हिन्दी प्रचरिणी सभा तथा अन्य संस्थानों के सहयोग तथा पण्डित विष्णुदयाल और डा. शिवसागर रामगुलाम के नेतृत्व में भारतीय संस्कृति और इसकी वाहक हिन्दी अपनी उत्कृष्टता पाने में सफ़ल हुई. आज महात्मा गांधी संस्थान और इन्दिरा गांधी सांस्कृतिक केन्द्र, भाषा प्रचार और सांस्कृतिक गतिविधियों को विस्तार दे रहे हैं. भारत सरकार के सहयोग से अब हिन्दी स्पीकिंग यूनियन तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर संस्थान भी इस सांस्कृतिक अभियान में जुड़ गए हैं, तथा हिन्दी सचिवालय की स्थापना में नया आयाम मिला है.

थाईलैण्ड में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन का कार्यक्रम सबसे पहले थाई-भारत सांस्कृतिक आश्रम से शुरु हुआ जिसकी स्थापना सन 1943 में स्वामी सत्यानन्दपुरीजी ने की थी. आचार्य डा. करुणा कुसलासायजी पहले थाई विद्वान थे, जो हिन्दी पढ़ने भारत आए थे. महात्मा गांधी से सारनाथ में मिले और जब वे लौटे तो

थाई-भारत सांस्कृतिक आश्रम में ही हिन्दी पढ़ाना शुरु किया और बैंकाक के भारतीय दूतावास में नौकरी शुरु की.

सन 1989 में सिल्पाकोव वि.वि. के पुरातत्व विज्ञान संकाय के प्राच्य भाषा विभाग मे एम.ए.संस्कृत पाठ्यक्रम बनाया गया. उस समय आचार्य डा. चमलोडां शारफ़ेदनूक हिन्दी शिक्षक थे. सन 1966 में शिलपाकोन वि.वि. के पुरातत्व विज्ञान संकाय के प्राच्य भाषा विभाग के संस्कृत अध्यापन केन्द्र की, भारतीय आगन्तुक डा. सत्यव्रत शास्त्री के द्वारा स्थापना की गई. 1993 में थमसात वि.वि. में थाईलैण्ड के भारतीय व्यापारियों के सहयोग से भारत अध्ययन केन्द्र की स्थापना हुई. डा. करुणा कुशलासाय, डा. चिरफ़द प्राकन्विध्या एवं आचार्य डा. चम्लोंग शरफ़दनूक तीनों ने हिन्दी कक्षाएं चलायी.

इस संबंध में वास्तविकता यह है कि गुट निर्पेक्ष राष्ट्रों के मुखिया भारत, संसार की उभरती अर्थ-शक्तिभारत, परमाणुशक्ति संपन्न राष्ट्र भारत, संस्कृति और दर्शन के क्षेत्र में पथ-प्रदर्शक भारत, एवं संसार के सबसे बड़े बाजारों में एक भारत से निकटता बढ़ाने के लिए विश्व का हर देश ललायित है. यही कारण है कि विश्व के अनेक देश अपने यहाँ हिन्दी शिक्षण की उच्चस्तरीय व्यवस्था कर रहे हैं. इस देशों में अमरीका, रुस, इंगलैण्ड, फ़्रांस, चीन, जापान, आस्ट्रेलिया, कनाडा जैसे विश्व के प्रभावशाली देश भी शामिल हैं. इतना ही नहीं प्रवासी भारतीयों ने अपनी संस्कृति के रक्षा के लिए हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था विश्व में बड़े व्यापक स्तर पर की है. वे हिन्दी की सुरक्षा, प्रतिष्ठा एवं प्रचार के लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध हैं.

विदेशों में पचास से अधिक देशों के 600 से अधिक विश्वविद्यालयों और स्कूलों में हिन्दी पढ़ाई जा रही हैं। भारत से बाहर जिन देशों में हिन्दी का बोलने, लिखने-पढने तथा अध्ययन और अध्यापक की दृष्टि से प्रयोग होता है, उन्हें हम इन वर्गों में बांट सकते हैं. (1). जहाँ भारतीय मूल के लोग अधिक संख्या में रहते हैं, जैसे - पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बंगलादेश, म्यांमार, श्रीलंका और मालदीव, मारीशस आदि. (2.) भारतीय संस्कृति से प्रभावित दक्षिण पूर्वी एशियाई देश, जैसे- इंडोनेशिया, मलेशिया, थाईलैंड, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा जापान आदि. (3.) जहां हिन्दी को विश्व की आधुनिक भाषा के रूप में पढाया जाता है (३)अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और यूरोप के देश. (4.) अरब और अन्य इस्लामी देश, जैसे- संयुक्त अरब अमरीरात (दुबई) अफगानिस्तान, कतर, मिस्र, उजबेकिस्तान, कज़ाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान आदि।

हिन्दी विश्व के सर्वाधिक आबादी वाले दूसरे देश भारत की प्रमुख भाषा है तथा फारसी लिपि में लिखी जाने वाली भाषा उर्दू हिन्दी की ही एक अन्य शैली है। लिखने की बात छोड़ दें तो हिन्दी और उर्दू में कोई विशेष अंतर नहीं रह जाता सिवाय इसके कि उर्दू में अरबी, फारसी, तुर्की आदि शब्दों का बहुलता से इस्तेमाल होता है। एक ही भाषा के दो रूपों को हिन्दी और उर्दू, अलग-अलग नाम देना अंग्रेजों की कूटनीति का एक हिस्सा था।

इस प्रकार हिन्दी आज भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के विराट फलक पर अपने अस्तित्व को आकार दे रही है। आज हिन्दी विश्व भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त करने की ओर अग्रसर है। अब तक भारत और भारत के बाहर सात विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित हो चुके हैं। अब तक दस विश्व हिन्दी सम्मेलन क्रमश: नागपुर (1975), मॉरीशस (1976), नई दिल्ली (1983), मॉरीशस (1993), त्रिनिडाड एंड टोबेगो

(1996), लंदन (1999), सूरीनाम (2003), न्यूयार्क (यू.एस.ए)   2007, जोहानसबर्ग (२०१२), भोपाल (2015). में हो चुके हैं. ग्यारहवाँ विश्वहिन्दी सम्मेलब अब मारीशस में किया जाना है.

यह इस बात से प्रमाणित हो जाता है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी को पीछे ढकेलने वाली शाजिशों के बावजूद हिन्दी भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी लोकप्रिय हो रही है. इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि भारत के लगभग 170 स्वयंसेवी संगठन हिन्दी के प्रचार-प्रसार एवं संवर्धन निष्ठा के साथ एवं अधिक सुनियोजित ढंग से कर रहे हैं. जहाँ तक विश्वभाषा के रुप में हिन्दी की लोकप्रियता और प्रतिष्ठा का प्रश्न है, शंकरदयाल सिंह के निम्नाकिंत शब्द इसे भली भांति स्पष्ट करते हैं-" जिस भाषा की पढाई विश्व के 600 से अधिक विश्वविद्यालयों में हो रही हो, 50 से अधिक देश जिस भाषा का प्रयोग किसी न किसी रुप में कर रहे हों तथा जिसके बोलनेवालों की संख्यां करोड़ों तक पहुँच चुकी हो, वह भाषा विश्वभाषा (अंतरराष्ट्रीय) न कही जायेगी तो क्या कहा जाएगा ?".